Reg. No. 124726035RC0001 ISSN : 2562-6086

पुस्तक भारती रिसर्च जर्नल

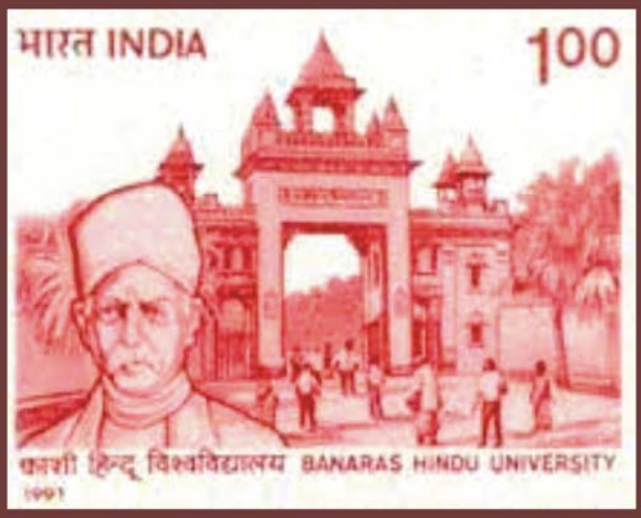

Our Golden Heritage

July-September 2021

Pustak Bharati, Toronto, Canada

पुस्तक भारती रिसर्च जर्नल

PUSTAK BHARATI RESEARCH JOURNAL

A Peer Reviewed Journal

त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष- 3, जुलाई-सितंबर, 2021 अंक - 3

प्रधान संपादक : डॉ. रत्नाकर नराले

सह संपादक : डॉ. राकेश कुमार दूबे

रिव्यू कमेटी

डॉ. प्रो. तंकमणि अम्मा, तिरुवनन्तपुरम्
प्रो. हेमराज सुंदर, मारीशस
डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय, मुंबई
प्रो. डॉ. शांति नायर, केरल
डॉ. सिराजुद्दिन नुर्मतोव, उजबेकिस्तान
प्रो. दक्ष्य मिस्त्री, बड़ोदा
प्रो. कृष्ण कुमार मिश्र, मुंबई

संपादक मण्डल

प्रो. सोमा बंद्योपाध्याय, पश्चिम बंगाल
प्रो. अरुणा सिन्हा, वाराणसी
प्रो. विनोद कुमार मिश्र, त्रिपुरा
प्रो. उमापति दीक्षित, आगरा
प्रो. उपुल रंजीथ हेवावितानागामगे, श्रीलंका
डॉ. मैरम्बी नुरोवा, ताजिकिस्तान
प्रो. दर्शन पाण्डेय, दिल्ली

परामर्ष मण्डल

डॉ. तुलसीराम शर्मा, कनाडा
डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, नई दिल्ली
डॉ. एन. के. चतुर्वेदी, जोधपुर
प्रो. नीलू गुप्ता, अमेरिका
डॉ. मृदुल कीर्ति, आस्ट्रेलिया
प्रो. कमलेश शर्मा, कोटा

संरक्षक मण्डल

डॉ. यशवंत पाठक, अमेरिका
श्री रतन पवन, अमेरिका
श्री पंकज पटेल, अमेरिका

अनुक्रमणिका

संपादकीय

1. बृहदारण्यकोपनिषद् : भारतीय दर्शन का मेरुदंड 1
   डॉ. पी. गीता
2. 19 वीं सदी के उपन्यासों में भारतीय समाज 7
   डॉ. मोहम्मद राशिद
3. सामाजिक विकास में विज्ञान और तंत्रज्ञान 13
   प्रो. (डॉ.) अर्जुन चव्हाण
4. Indian Culture in the works of Abu Rayhan Biruni
   Umida Kuranbaeva Sultannazarovna 22
5. उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ भारत-चीन सहयोग 33
   डॉ. डी.सी. चौबे
6. उज़बेकिस्तान में हिंदी भाषा और भारतीय संस्कृति के अध्ययन के बारे में विचार 40
   डॉ. कमोला रख्मतजानोवा
   डॉ. बायोत रख्मातोव
7. फिजी में भारतीय संस्कृति के संरक्षण में रामायण की भूमिका 46
   डॉ . गौतम कुमार
8. अभिनव परम्परा का अभिराम काव्योपक्रम 'नतितति': 52
   डॉ. वत्सला
9. नागार्जुन के कवि-कर्म का एक रूप यह भी 59
   डॉ. बहादुर मिश्र

संपादकीय कार्यालय

Toronto, Ontario, Canada, M2R
email : pustak.bharati.canada@gmail.com
Web : pustak-bharati-canad.com

प्रबंध एवं वितरण

Pustak Bharati (Books-India)Publishers & Distributors
H.No. 168, Nehiyan,Varanasi-221202, U. P. India
email: pustak.bharati.india@gmail.com

पत्रिका का नूल्य / सदस्यता राशि Pustak Bharati Pubs.& Dists. के सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, मंगारी के खाता संख्या 5144696109 (IFSC: CBIN0281306) में जमाकर उसकी सूचना मेल या नं. +91-7355682455 पर दें।

* प्रत्येक शोध-पत्र में व्यक्त विचार लेखक के अपने हैं। संपादक मंडल का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संपादकीय

रत्नाकर नराले

नमस्ते

नमस्ते! "नमस्ते" का अभिवादन अब तक केवल भारतीय अथवा भारतीय संस्कृति में सीमित होता था और भारत के लिबरांडू इस अभिवादन प्रथा को निकृष्ट मान कर पाश्चात्य संस्कृति के अनुकर्ता बंदर बन कर स्वाभिमान के साथ हैलो! हैलो! हाय! हाय! कह कर हाथ मिलाना और हिलाना शिरोधार्य मानने लगे थे. तभी अचानक इस हैलो! हैलो! हाय! हाय! कह कर हाथ मिलाने-हिलाने पर आवश्यक पावंदी लग कर बदलाव आगया और अब अभिवादन "नमस्ते कह" कर होने लगा है. सुविचार पर कुविचार अधिक समय तक हावी नहीं हो सकता.

नमस्ते का अभिवादन तो अब अंतर्राष्ट्रीय बन चुका है. इसकी वजह है कोरोना की सोशल-डिस्टेंसिंग. जो रीति-रिवाज हजारों वर्ष पूर्व ही हमारे चिंतक पूर्वजों द्वारा सकारण संशोधित एवं प्रचलित किया गया था, वह अब सर्वत्र सानंद स्वीकार्य हो गया है. अमरीका के राष्ट्राध्यक्ष और यू.एन. से लेकर आम जनता तक सामान्य हो गया है, भारतीय लिबरल लोगों सहित.

यही बात हुई है योग के बारे में. जो सदाचार हमारे पढ़े-लिखे भारतीयों ने आदिम समझ कर त्याग दिया था वही पाश्चात्यों ने सीख कर आगे बढ़ाया. उसमें हॉट योगा, कोल्ड योगा, ओल्ड योगा, चेअर योगा, आदि ऊटपटांग परिवर्तन किए और फिर नकलमंद भारतीयों ने पाश्चात्यों की प्रतिकृति समझ कर योग को फिर से अपना लिया है. अब आगे, यही बात होगी शाकाहार की, आयुर्वेद की, पशु-अहिंसा की, दाह संस्कार की, गायत्री मंत्र की, संस्कृत वाणी की, आदि आदि. चलो देर से सही दुरुस्त आ रहे.

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है -

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ।। गीता 3.35

यद्वा न्यूनो हि नो धर्मः परधर्मान्महत्तरः ।
स्वधर्मे मरणं श्रेयः परधर्मस्तु घातकः ।। कृष्णायन 757

दोहा

अपना धर्म, सदोष भी, जानो उसे महान ।
अपर धर्म अनुसार कर, अपना है नुकसान ।। कृष्णायन 961

स्वधर्म को तजना नहीं, उसमें हो यदि दोष ।
स्वधर्म में मरना भला, सभी हैं धर्म सदोष ।। कृष्णायन 962

1 बृहदारण्यकोपनिषद् : भारतीय दर्शन का मेरुदंड

डॉ. पी. गीता

उपनिषद्, भारतीय दर्शन का ऐसा अपरिमित स्रोत है जिससे ज्ञान की अजस्र धारा निर्गलित होती है। उपनिषद्, वेदांत या वेद-सार भी कहलाता है , क्योंकि इसमें वैदिक रहस्यों का अनावरण हुआ है। भारतीय दर्शन और साहित्य पर उपनिषदों के प्रभाव को इस बात से आसानी से समझा जा सकता है कि उपनिषदों के बाद उपजे बौद्ध, जैन आदि धर्मों, सांख्यादि षड्दर्शनों और रामायण, महाभारत, भगवद्गीता जैसी दार्शनिक साहित्यिक कृतियों में उपनिषदों के दार्शनिक रहस्यों की कई झलकियाँ विद्यमान हैं। श्रीमद् भगवद्गीता के ध्यान-श्लोक में कहा गया है कि -

" सर्वोपनिषदो गावो
दोग्धा गोपालनन्दनः
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता
दुग्धं गीतामृतं महत् । । "

अर्थात् भगवद्गीता-रूपी दूध सभी उपनिषदों-रूपी गायों से दुहा गया है, उपनिषदों का सार ही भगवद्गीता का कथ्य है। वहाँ से शुरू होनेवाली एक प्रौढ परंपरा आज भी संपूर्ण भारतीय साहित्य में न्यूनाधिक मात्रा में विद्यमान है।

उपनिषद् दरअसल ज्ञान-समुद्र है। इस ज्ञान-समुद्र से लौकिक और नश्वर दु:ख को मिटाया जा सकता है। लेकिन सामान्य जन के लिए इस अथाह ज्ञान-समुद्र की गहराई तक पहुँचना आसान बात नहीं है। लेकिन विद्वानों की राय में जिस व्यक्ति में लगन और अभ्यास की लालसा है, वह इस गहराई को नाप सकता है - "पर वस्तुतः ऐसी बात नहीं है, जितना यह ज्ञान कठिन है, उतना सरल भी है। जिस प्रकार पानी में तैरना कठिन दिखाई पडता है, उसमें दुर्घटना की आशंका भी प्रतीत होती है, किंतु जब सच्ची लगन होती है और प्रयत्नपूर्वक अभ्यास किया जाता है तो वह कठिन कार्य सरल बन जाता है । "[1] उपनिषदों में प्रतिपादित ज्ञान सामान्य ज्ञान नहीं है, बल्कि वह एक ऐसी अनवरत खोज है, जो परम ज्ञान की प्राप्ति के द्वारा ही संपन्न हो सकती है - "यह सच है कि उपनिषदों के सामने यही एक विषय है: - " वह कौन सा ज्ञान है जिससे हम बाकी सब कुछ जान सकते हैं? "[2] इस परम ज्ञान को पाने के लिए कठिन लगन, निष्ठा और अभ्यास की ज़रूरत है, जिसकी ओर पंडितों ने इशारा किया है ।

उपनिषदों की संख्या अधिकांश विद्वानों ने 108 मानी है। इसके बावजूद, ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुंडक, मांडूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छांदोग्य और बृहदारण्यक जैसे दस उपनिषद् ही महत्वपूर्ण माने गये हैं, जो दशोपनिषद् की संज्ञा से प्रसिद्ध हैं। शायद इसलिए ही श्रीशंकराचार्य ने भाष्य तैयार करने के लिए इन दस उपनिषदों को चुना था। इनमें बृहदारण्यकोपनिषद्, जो 108 उपनिषद् हैं, उनमें सबसे बृहत् है। अत्यंत महत्वपूर्ण बृहदारण्यकोपनिषद् की महिमा को बखारना, सूरज के सामने दिया जलाने के समान होता है। इस उपनिषद् के नाम के संबंध में विद्वानों के बीच थोडा मतभेद है। अधिकांश विद्वान श्री शंकराचार्य की राय का अनुसरण करते हुए इसके बडे आकार और वन (अरण्य) में इसका अध्ययन होने को इस नाम के पीछे का कारण मानते हैं - "आकार की दृष्टि से यह सभी उपनिषदों में सबसे बडा है। जंगल में इसका प्रणयन होने के कारण इसे आरण्यकम् भी कहा जाता है । "[3] अन्य विद्वान्-गण से शतपथ ब्राह्मण से संबद्ध मानते हैं और इसमें आरण्यकम् और उपनिषद्, दोनों का प्रभाव देखते हैं -

"शुक्लयजुर्वेद से संबद्ध शतपथब्राह्मण के अंतिम छह अध्यायों को बृहदारण्यकोपनिषद् कहते हैं। इसमें आरण्यक और उपनिषद दोनों ही मिश्रित हैं, इसलिए इसका नाम बृहदारण्यकोपनिषद् पडा । "[4] यह उपनिषद छः अध्यायों और अनेक ब्राह्मणमों में विभक्त है। पहले अध्याय में छः ब्राह्मणम् हैं। दूसरे अध्याय में छः, तीसरे अध्याय में नौ, चौथे अध्याय में छः (यह सबसे लंबा अध्याय है), पाँचवें अध्याय में पंद्रह (लेकिन छोटे छोटे हैं) और छठे अध्याय में पाँच ब्राह्मणम् हैं। कुल मिलाकर 47 ब्राह्मणम् हैं। श्री शंकराचार्य ने सिर्फ इस उपनिषद् की ही इतनी विस्तृत और विशद व्याख्या की है। उनकी व्याख्या को ही उपनिषद्-व्याख्याओं में सर्वोत्कृष्ट स्थान प्राप्त हुआ है।

हर उपनिषद् किसी न किसी शांतिपाठ से शुरू होता है। बृहदारण्यकोपनिषद् की शुरुआत भी प्रसिद्ध शांतिपाठ से होती है –

"ॐ। पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ॐ शांतिः शांतिः शांतिः"

अर्थात् वह (ब्रह्म) पूर्ण है। यह (कार्यब्रह्म) भी पूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण बनाता है। पूर्ण से पूर्ण को लेने पर भी पूर्ण ही शेष रह जाता है। यह तो भारतीय दर्शन का मूल है।

पहले अध्याय का प्रारंभ यज्ञाश्व की विराट् संकल्पना से हुआ है। यज्ञाश्व के विभिन्न अंगों की तुलना संसार के सभी तत्वों से की गई है। उसके बाद आत्मा की उत्पत्ति की बात कही गई है। शुरूआत में एक ही आत्मा थी। उसने एकाकीपन से बचने के लिए पत्नी की कामना की। उसके बाद अर्थ की। ऐसा कहा जाता है कि इस कारण से अकेलेपन से उत्पीड़ित पुरुष पत्नी और संतानों को मिलना चाहता है और कर्म करने के लिए धन-संपत्ति चाहता है। इनमें से एक के न मिलने पर भी वह अपूर्णता का अहसास करता है। लेकिन वह भूल जाता है कि मन ही आत्मा है, वाणी उसकी पत्नी है, प्राण संतान है और नेत्र उसका धन है।

इस अध्याय में विभिन्न अंगों का वर्णन है। मन और वाणी की व्याख्या है। इसमें तीन संसारों का ज़िक्र किया गया है कि मनुष्यलोक, पितृलोक और देवलोक। पुत्रों से मनुष्यलोक पर विजय प्राप्त की जा सकती है। पितृलोक को जीतने के लिए कर्म और देवलोक को जीतने के लिए विद्या की ज़रूरत है। इस संसार में सबसे श्रेष्ठतम देवलोक है। इसमें व्रतमीमांसा की विस्तृत चर्चा है। यह संसार नाम, रूप, कर्म का समन्वय है।

दूसरे अध्याय में गार्ग्य गोत्रज बालाकी, काशिराजा अजातशत्रु को ब्रह्मोपदेश देने का वादा करता है। इसमें इन दोनों के बीच का संवाद है। इन संवादों में आत्मा की संकल्पना से संबंधित गहरी व्याख्याएँ छिपी हुई हैं। उदाहरण के लिए अजातशत्रु का यह कथन द्रष्टव्य है- "जब यह आत्मा स्वप्नावस्था में स्थित होती है, तब पुरुष का कर्म-फल प्रकट होता है। उसके अनुसार वह उच्च या नीच अवस्था प्राप्त करता है। जिस प्रकार एक महाराजा अपनी प्रजाओं को वश में रखकर अपने देश में इच्छानुसार विचरण करता है, उसी प्रकार वह प्राण को ग्रहण करके अपने शरीर में स्वच्छंद विचरण करता है।"[5] इस अध्याय में बताया गया है कि यह आत्मा जो है, वह अमृत है, ब्रह्म है, सर्वस्व है। आत्मा में समस्त भूत, समस्त देवता, समस्त संसार, समस्त प्राण और सभी समर्पित हैं। 'अहम् ब्रह्मास्मि' की भावना इसमें निहित है। यहाँ मधुब्राह्मण का उपदेश दध्यङ्ङाथर्वणन नामक ऋषि अश्विनी कुमारों को देते हैं। इस दूसरे अध्याय में बताया गया है कि ब्रह्म के मूर्त-अमूर्त, मर्त्य- अमर्त्य, स्थित-सीमारहित, दृश्य-अदृश्य आदि दो-दो रूप हैं।

तीसरे अध्याय में जनक महाराज का ज़िक्र किया गया है। उनके मन में एक जिज्ञासा जाग उठी थी कि ब्राह्मणों में सबसे समर्थ प्रवाचक कौन है? उस व्यक्ति

को देने के लिए उन्होंने हज़ार गायों को गोशाला में बाँधकर रखा जिसके सींगों पर दस-दस सोने के सिक्के बाँधकर रखे थे। याज्ञवल्क्य से यहाँ अनेक ऋषि विभिन्न विषयों को लेकर संवाद करते हैं।

उदाहरण के लिए आर्तभागन पूछते हैं – "जब एक मनुष्य मर जाता है तब प्राण उत्क्रमण करता है या नहीं।"[6] याज्ञवल्क्य बताते हैं – "नहीं, नहीं, वह यहाँ ही विलीन हो जाता है। उसका विकास होता है। वह वायु को भीतर लेता है। वह वायु से भरे हुए रूप में ही मरने के बाद भी लेट जाता है।"[7]

आत्मा क्या है? इसकी विस्तृत व्याख्या याज्ञवल्क्य ने की है। यहाँ वाणी की महत्ता पर ज़ोर दिया गया है, उसी प्रकार मन की भी। यज्ञ के बारे में अनेक प्रश्न पूछे गए हैं। याज्ञवल्क्य आर्तभागन द्वारा पूछे गए सवाल का जवाब इस प्रकार देते हैं कि अग्नि ही मृत्यु है, वह जल का अन्न है। जिसको इसका ज्ञान है वह पुनर्मृत्यु को जीतता है। एक मृत व्यक्ति की वाणी अग्नि में, प्राण वायु में, चक्षुस् आदित्य में, मन चाँद में, श्रोत्रम दिशाओं में, शरीर पृथ्वी में, हृदयाकाश भूताकाश में, रोम औषधि में, शुक्ल-रेतस् जल में विलीन होता है।

इस (तीसरे) अध्याय के छठे और आठवें ब्राह्मणमों में गार्गी-याज्ञवल्क्य संवाद विख्यात है। गार्गी वाचक्नु की पुत्री है।

गार्गी – "सब जल में ओतप्रोत है, लेकिन जल किसमें ओतप्रोत है?"
याज्ञवल्क्य- "वायु में।"
गार्गी - "वायु किसमें ओतप्रोत है?"
याज्ञवल्क्य- "अंतरिक्ष में।"
गार्गी - "अंतरिक्ष किसमें ओतप्रोत है?"
याज्ञवल्क्य- "गंधर्वलोक में।"[8]

इस प्रकार संवाद आगे बढ़ता है। याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि गंधर्वलोक आदित्यलोक में आदित्य लोक चंद्रलोक में, चंद्रलोक नक्षत्रलोक में, नक्षत्रलोक देवलोक में, देवलोक इंद्रलोक में, इंद्रलोक प्रजापतिलोक में, प्रजापतिलोक ब्रह्मलोक में ओतप्रोत है। तब गार्गी ने सवाल उठाया कि ब्रह्मलोक किस में ओतप्रोत है? तब याज्ञवल्क्य ने बताया – "गार्गी, अति प्रश्न मत पूछना। तेरा सिर नीचे गिरेगा। जिस विषय के बारे में अतिप्रश्न नहीं पूछना चाहिए तू उस देवता के बारे में अतिप्रश्न पूछ रही है।"[9] तब गार्गी ने चुप्पी साधी। इस प्रसंग को लेकर वर्तमान समय में बहुत अधिक गलतफ़हमी हुई है। ऐसा आरोप लगाया गया कि याज्ञवल्क्य स्त्री-विरोधी थे, घमण्डी थे, स्त्री-हत्या करने की धमकी देनेवाले थे, गर्वीला थे, दुरभिमानी थे आदि। यहाँ याज्ञवल्क्य ने सिर्फ एक आपत्ति आने की संभावना के बारे में चेतावनी दी है।

तीसरे अध्याय के आठवें ब्राह्मणम् में गार्गी ने दो सवाल उठाए। उन दोनों का सही जवाब जब याज्ञवल्क्य ने दिया तो गार्गी ने दूसरे ब्राह्मण-श्रेष्ठों से बताया कि "आप सबमें से कोई भी याज्ञवल्क्य को ब्रह्मज्ञान विषय के संवाद में पराजित नहीं कर सकते।"[10] फिर नौवें ब्राह्मण में याज्ञवल्क्य-शाकल्य संवाद है। इस लंबे संवाद के अंत में याज्ञवल्क्य ने बताया कि समानन् में, मधुकाण्डम में नेति, नेति कहकर व्याख्या की गयी आत्मा अगृह्य, अशीर्य और असंग है। उलटे शाकल्य से याज्ञवल्क्य एक प्रश्न पूछते हैं कि आठ आयितन् हैं, आठ संसार हैं, आठ देवता हैं, आठ पुरुष हैं, उन पुरुषों को निश्चयपूर्वक जानकर, उन्हें अपने हृदय पर उपसंहार करके औपाधिक धर्मों का अतिक्रमण जो औपनिषद् पुरुष ने किया है उसके बारे में बताइए। यदि आप कह न सकें तो सिर नीचे गिरेगा। शाकल्य इससे अनभिज्ञ थे इसलिए उनका सिर नीचे गिरा और चोर आकर उसकी हड्डियों को कोई अन्य वस्तु समझकर ले गए। याज्ञवल्क्य ने ब्राह्मणों से आगे भी सवाल उठाने को कहा, नहीं तो वे स्वयं उनसे सवाल उठायें। लेकिन ब्राह्मण डर गए। इसलिए उन्होंने कोई प्रश्न नहीं पूछे। इस अध्याय में याज्ञवल्क्य ने पुरुष (पुरुष का मतलब परमात्मा ही है।) की तुलना वृक्ष से की है। उनकी राय में पुरुष वृक्ष के समान है। वृक्ष किन-किन धर्मों से युक्त है, ठीक उसी प्रकार पुरुष,

यानि प्राण का शरीर, इस प्रकार के धर्मों से संपन्न है। यह पूर्णतः सत्य है। वृक्ष पर जिस प्रकार पत्ते होते हैं, उसी प्रकार पुरुष के शरीर पर पत्तों के स्थान पर रोएँ हैं। वृक्ष के बाह्य भाग में जो खाल है, उसी प्रकार पुरुष के शरीर पर त्वचा है। जिस प्रकार पुरुष की त्वचा से रक्त निकलता है, उसी प्रकार वृक्ष की खाल से दाग निकलता है। पुरुष के शरीर पर जिस प्रकार माँस है, उसी प्रकार वृक्ष के अंदर का खाल है। पुरुष के स्नायु वृक्ष के सबसे अंदर का खाल है। पुरुष के स्नायु के अंदर जो हड्डियाँ हैं, उसी प्रकार वृक्ष के अंदर काठ है। मज्जा दोनों में समान है। 'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मामृतं गमय' से शुरू होनेवाला प्रसिद्ध मंत्र इस अध्याय में है। (1.3.28)

चौथे अध्याय में पुनः जनक-याज्ञवल्क्य का संवाद है। इस अध्याय के पाँचवें ब्राह्मणम् में मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य के बीच का संवाद भी विख्यात है। याज्ञवल्क्य के दो पत्नियाँ थीं, मैत्रेयी और कात्यायनी। मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी और कात्यायनी बुद्धिशाली थी। याज्ञवल्क्य ने सन्यास ग्रहण करने का निर्णय लिया तो अपनी संपत्ति दोनों पत्नियों को बराबर बाँटने का निश्चय किया। कात्यायनी ने प्रेयकामिनी होने के कारण चुप्पी साधी। लेकिन मैत्रेयी श्रेयकामिनी थी। इसलिए याज्ञवल्क्य से पूछा – "यदि अर्थ और अनाजों से संपूर्ण यह धरती पूर्णतः मुझे मिले तो क्या अमरत्व प्राप्त हो सकता है । " [11] याज्ञवल्क्य ने जवाब दिया – "नहीं, लेकिन इससे अमीर लोग जैसे भोगविलास से युक्त जीवन बिताते हैं ऐसा जीवन तुम्हें मिलेगा । "[12] ब्रह्मवादिनी मैत्रेयी तब उसका तत्व समझ गयी और उन्होंने कहा अमरत्व-प्राप्ति के लिए जो धन-संपत्ति सहायक नहीं है, उससे कोई फायदा नहीं। अपनी पत्नी मैत्रेयी की अदम्य, उत्कट इच्छा और जिज्ञासा देखकर याज्ञवल्क्य ने खुश होकर उनको ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया। उसका मार्मिक तत्व यह है कि ब्रह्म और आत्मा दोनों अभिन्न हैं। आत्मज्ञान से ही शेष सभी ज्ञानों की प्राप्ति होगी। आत्मा से ही सर्वभूतों की उत्पत्ति होती है। जिनके मन में यही ज्ञान होता है कि सभी आत्मा ही है, उनके लिए कर्ता, क्रिया और कारण नहीं है। याज्ञवल्क्य ने बताया कि सबको, सभी अपने-अपने प्रयोजन के लिए प्रिय होते हैं चाहे पति-पत्नी, संतान जो भी हो। ब्रह्मज्ञान देने के लिए वे अनेक दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं। यह पृथ्वी, सर्वभूतों का मधु है उसी प्रकार जल, अग्नि, वायु, आदित्य, दिशाएँ, चाँद, विद्युत्, मेघ, आकाश, धर्म, सत्य, मानव-जाति, आत्मा सभी सर्वभूतों का मधु है। आत्मा समस्त भूतों का अधिपति है। दध्यङ्ङाथर्वणन नामक ऋषि ने मधुब्राह्मणम को अश्विनीकुमारों को बताया।

पाँचवाँ अध्याय आकाशब्रह्म की व्याख्या से शुरू होता है। आकाश जड़ नहीं सनातन है। इसमें विभिन्न उपासनाओं के बारे में बताया गया है। देव, मनुज और असुर प्रजापति के पुत्र हैं। ये तीनों, पिता प्रजापति के पास जाकर ब्रह्मचर्यव्रत का अनुष्ठान किया। इसके बाद पिता से उपदेश देने का अनुरोध किया। प्रजापति केवल 'द' वर्ण कहा – इसका अर्थ है – दान देना, दमन करना, दया दिखाना है। तीसरे ब्राह्मणम् में बताया गया है कि हृदय ही प्रजापति है। इस अध्याय में विभिन्न अक्षरों की विस्तृत व्याख्या है। इसमें छोटे छोटे 15 ब्राह्मणम् हैं। इसमें ऐसा बताया गया है कि ब्रह्म ही सत्य है, सत्य ही ब्रह्म है। मृत्युपरांत पुरुष को क्या होता है – इसका विस्तृत वर्णन है कि वह वायु में लीन होता है। वह सूर्यलोक में पहुँचता है, फिर उससे ऊपर चंद्रलोक में, फिर उससे भी ऊपर दुःख रहित लोक में पहुँचकर अनंत वर्षों तक जीता है। प्राण की विभिन्न तरह की व्याख्या इसमें निहित है। आठ वर्षीय वटु को आचार्य द्वारा उपनयन के समय सावित्री-उपदेश दिया जाता है। इसका छन्दस् गायत्री है। इस अध्याय के अंतिम भाग में 'हिरण्मयेन पात्रेणा सत्यस्यापीहितम् मुखम्' कहा गया है। सत्यसंज्ञक ब्रह्म

का मुख सोने द्वारा निर्मित बर्तन से आच्छादित है। सूर्यदेव से उसे हटाने की प्रार्थना की जाती है।

छठे अध्याय में प्राण और वाणी की महत्ता के बारे में बताया गया है। भोजन के पहले और बाद में आचमन करना है। यहाँ बताया गया है कि जिन गृहस्थों को पंचाग्निविद्या की जानकारी है वे वन जाकर सत्य की उपासना करते हैं। उद्दालक आरुणी के शिष्य याज्ञवल्क्य को एक मंत्रोपदेश देता है और कहता है कोई इस मंत्र को सूखे खंभ पर डालेगा तो भी उससे शाखाएँ और पत्ते उगेंगे।

इसमें पुरुष, स्त्री, मैथुनकर्म आदि का विस्तृत वर्णन है। भोगार्थरहित होकर केवल संतानोत्पत्ति केलिए मैथुन-कर्म करना संयमित होना है। संतानोत्पादनक्षम गृहस्थाश्रम और यौवनावस्था में मात्र यह उचित है। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थन्, यति, बालक, वृद्ध, लौकिक- विरक्त आदि के लिए यह त्याज्य है।

रजस्वला स्त्री को क्या-क्या अनुष्ठान करने हैं इसके बारे में बताया गया है। गोरे, काले, कपिल रंगवाले, पिंगलवर्णवाले, लाल आँखोंवाले पुत्रों को प्राप्त करने के लिए, विदुषी पुत्री को प्राप्त करने के लिए कैसे उपासना करनी है, किस प्रकार के भोजन को अपनाना है, मैथुन-कर्म के समय से लेकर गर्भावस्था, प्रसूती के समय कैसे कैसे मंत्रोच्चारण करना है, किस भोजन को अपनाना है ....इन सबका विस्तृत वर्णन है।

अंत में वंशावली है। इसके अंत में ऐसा बताया गया है कि प्रजापति, ब्रह्मा से उद्भूत हुए। ब्रह्म स्वयंभू हैं। 'उसी ब्रह्म को नमस्कार' इस उक्ति से बृहदारण्यकोपनिषद् समाप्त होता है।

इस उपनिषद् की विशिष्टता और अहमियत के कारण ही श्री शंकराचार्य, गुरु नित्यचैतन्ययति, महर्षि अरविंद आदि महान हस्तियों ने इसकी गहरी व्याख्या की है। समकालीन संदर्भ में इसके अध्ययन की कई संभावनाएँ हैं। इसमें प्रतिपादित कई बातें वैज्ञानिकता की दृष्टि से भी समीचीन लगती हैं। लेकिन इसमें गोता लगाकर इसमें पड़े हुए दर्शन के मोतियों को पाने केलिए व्यक्ति को तन से और मन से आध्यात्मिक होने की सख्त ज़रूरत है। स्वामी शिवानन्द की यह टिप्पणी यहाँ सौ प्रतिशत सार्थक सिद्ध होती है कि "बृहदारण्यक उपनिषद एक वास्तविक शोध-भंडार है और इसे वे लोग गहन अध्ययन के लिए ले सकते हैं, जो दिल से शुद्ध हैं, अपनी आकांक्षाओं में ईमानदार हैं, और पूरी तरह से आध्यात्मिक जीवन के लिए समर्पित हैं। "[13]

संदर्भ :

1. 108 उपनिषद् (ज्ञान खंड), पं. श्रीराम शर्मा आचार्य, संस्कृति संस्थान, बरेली, तृतीय सं., 1967, पृ. 12-13
2. It is true that Upanishads have this one theme before them : कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति। - " What is that knowing which we know everything else ?" **The complete works of Swami Vivekananda Part 3**, Advaita Ashrama, Calcutta, 1990, पृ. 397
3. उपनिषद्दीप्ति, सं. के. भास्करन नायर, श्रीवराहम्, तिरुवनंतपुरम, सं. 1987 भूमिका, पृ. i
4. जगराम सिंह, भारत दर्शन, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2020, पृ. 103
5. ईशादिविंशोत्तरशतोपनिषदः, नारायण राम आचार्य, निर्णयसागर मुद्रणालयम्, मुंबई, पं. संस्करणम्, सनाब्दाः 1948, पृ. 95
   'स यत्रैतत्स्वप्नया चरति ते हास्य लोकास्तदुदेव महाराजो भवत्युतेव महाब्राह्मणः उतेवोच्चावचं निगच्छति ; स यथा महाराजो जानपदान् गृहीत्वा स्वे जनपथे यथाकामं परिवर्तेत, एवमेवैष तत्प्राणान् गृहीत्वा स्वे शरीरे यथाकामं परिवर्तते' । । 2.2.18, 2

6. याज्ञवल्क्येति होवाच, यत्रायं पुरुषो म्रियते किमेनं न जहातीति; नामेति, अनन्तं वै नाम, अनन्तो विश्वो देवाः; अनन्तमेव स तेन लोकं जयति ।। 3.4.12 वही., पृ. 103
7. वही।
8. अथ ह्येनं गार्गी वाचक्नवी प्रपच्छ;...ततो ह गार्गी वाचक्नव्युपराम् ।। 3.6.1 वही, पृ. 104
9. वही।
10. सा होवाच, ब्राह्मणा भगवन्तस्तदेव बहु मन्येध्वम् ; न वै जातु युष्माकमिमं कश्चिद्ब्रह्मोद्यं जेतेति ; ततो ह वाचक्नव्युपराम् ।। 3.8.12 वही., पृ. 107
11. सा होवाच मैत्रेयी, यन्नु म इयं भगोः सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात् , स्यां न्वहं तेनामृताहो नेति ; नेति होवाच याज्ञवल्क्य ; यथैवोपकरणवतां जीवितं तथैव ते जीवितं स्यात्, अमृतत्वस्य तु नाशास्ति वित्तेनेति।। 4.5.3 वही, पृ. 119-20
12. वही।
13. The Brihadaranyaka Upanishad is a veritable research reservoir and may be taken up for intensive study by those who are pure in heart, sincere in their aspirations, and wholly devoted to a Godly life.
Swamy Shivananda, The Brihadaranyaka Upanishad, The Divine Life Society, Tehri-Garhwal, Uttarakhand. Ed. 2017, Introduction p.vii

Dr.P.GEETHA
Associate Professor&Head,
Dept.of Hindi, Sri Vyasa NSS College,
Wadakkanchery, Trissur Dt.

2 19 वीं सदी के उपन्यासों में भारतीय समाज

डॉ. मोहम्मद राशिद

उन्नीसवीं सदी में भारत में विभिन्न स्तरों पर परिवर्तन का युग रहा है। बल्कि हम यह कह सकते हैं कि परिवर्तन का यह रूप शायद ही किसी समय में देखने को मिला हो। जहाँ इन परिवर्तनों से हमारे देश की राजनीतिक स्थिति प्रभावित हुई, वहीँ हमारा साहित्य भी प्रभावित हुए बगैर नहीं रह सका । यहां के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थिति ग़रज़ कि समाज का कोई भी विभाग इसके प्रभाव से सुरक्षित नहीं रहा । जहां एक ओर पुरानी सांस्कृतिक मूल्य दम तोड़ रही थीं वहीं नए मूल्यों की नई संस्कृतियां अपना प्रभाव दिखाने के लिए बेताब थीं। जहां कुछ लोग पुराने मूल्यों को दिल से लगाए बैठे थे और उसे सुरक्षित रखने के लिए जी-जान से कोशिश कर रहे थे, वहीं कुछ लोग नई सभ्यता और नए समाज के गठन के लिए नए-नए तरीके अपनाने का प्रयास कर रहे थे।

सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्तर पर जितना भी परिवर्तन इस सदी में घटित हुआ इसमें सबसे अहम भूमिका यहां की राजनीतिक परिस्थितियों का रहा है। यहां के राजनीतिक हालात जिस तरह बदल रहे थे उसी तरह से हमारा समाज भी प्रभावित हो रहा था और जब हमारा समाज प्रभावित हुआ तो हमारी सभ्यता और हमारे आर्थिक हालात कैसे प्रभावित न हो सकते थे।

अंग्रेज भारत में पूरी तरह से काबिज हो गए। राजनीतिक प्रतिरोध करीब करीब खत्म हो चुका था। हर जगह अंग्रेज अपने मन मुताबिक सरकार चला रहे थे। जो भी कानून लागू हो रहे थे वह अंग्रेजों के अपने बनाए हुए थे जिस तरह वे चाहते थे उस तरह का कानून लागू करते थे जो कि समय और परिस्थितियों के अनुसार बदलते रहते थे। यह लोग यहां के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सभी क्षेत्रों पर काबिज हो गए थे जिसके कुछ अच्छे परिणाम और कुछ बुरे परिणाम जनता के सामने आ रहे थे। जहां एक ओर Development का काम हो रहा था वही दूसरी ओर यहां की जनता को कठोर अत्याचार का सामना करना पड़ रहा था। भारतीय जनता को वह सब काम करने पड़ते थे जो उनसे अंग्रेज कराना चाहते थे।

जाहिर है कि ऐसे बदतर हालात को जनता कब तक सहन करती । परिणाम यह हुआ कि भारत के कोने कोने से विद्रोह का सर बुलन्द होने लगा जिसमें बंगाल और पूर्वी भारत सबसे आगे थे। इन विद्रोहो में उड़ीसा के जमींदारों का विद्रोह, असम का विद्रोह, विजय नगर के राजा का विद्रोह आदि उल्लेखनीय है जो कि अंग्रेजों के होश उड़ाने के लिए काफी था। एक बार फिर भारत की जनता एकत्रित हो रही थी। लोगों में एक नया उत्साह, एक नई आशा और एक चमक आ गई थी। इस युद्ध ने प्राचीन और आधुनिक युग की एक दीवार खड़ी कर दी और यहां से एक नए सामाजिक-राजनीतिक युग की शुरूआत हो गयी थी । डॉक्टर खालिक अहमद निजामी लिखते हैं कि :

> "1857 की राजनीति और सांस्कृति भारतीय इतिहास में एक मील के पत्थर की हैसियत रखता प्राचीन और आधुनिक के बीच में यह वह मंजिल है जहां अतीत के छाप पढ़े जा सकते हैं और भविष्य की संभावनाओं का आकलन भी किया जा सकता है। "[1]

उन्नीसवीं सदी का भारत राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का सामना कर रहा था। जहां राजनीति में मुगल साम्राज्य के विभिन्न प्रांतों के राजा एक एक करके अपने राज्य अंग्रेजों के हाथों में दे रहे थे, वहीं इसके बुरे परिणाम भी लोगों के सामने

आ रहे थे। इसका असर यहां के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थितियों पर पड़ता हुआ दिखाई दे रहा था। पुराना समाज मिट रहा था। उसकी जगह एक नया समाज बन रहा था। भारत की आर्थिक स्थिति भी दिन प्रतिदिन खस्ता हो रही थी जो एक नई सभ्यता को जन्म दे रही थी।

यहां के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनो से साधारण भारतीय अज्ञात थे। राजनीति के नाम पर गृहयुद्ध और आपसी लड़ाई के अलावा उनके पास कुछ भी नहीं था। कुछ सरकार ने तो, कुछ प्रकृति ने अकाल की स्थिति में जो ज़ुल्म ढाए उसने आम इंसानों की स्थिति को और खराब कर दिया। यही वजह थी कि मुट्ठी भर अनाज के लिए ब्रिटिश सरकार के भरे हुए गोदामों के सामने हजारों भारतीयों ने दम तोड़ दिया। ऐसे विपरीत परिस्थितियों को देखते हुए कुछ बाहरी वाणिज्यिक कंपनियां अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए भारत आईं और यहां की राजनीति में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया। इसमें ईस्ट इंडिया कंपनी ने सभी पर बढ़त हासिल कर लिया जिसके बाद देश का शासन अंग्रेजों के हाथों में चला गया। राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्तर पर एक बहुत बड़ा परिवर्तन आ रहा था जिससे यहां के लोगों में अराजकता मच गई और यहाँ उनकी अपनी व्यवस्था दरहम बरहम हो गयी। अर्थव्यवस्था के तौर-तरीके बदल गए, उद्योग और कला बाज़ार में क्रांति पैदा हो गए। उस पर अत्याचार है कि यहां के कारीगरों से बाहरी देशों के व्यापारी कम कीमत पर अपने माल खरीदने लगे, जो बाजार में महंगे दामों पर बेचने लगे और अपने साथ लाई हुई मशीनों से घरेलू कारीगरों को करीब करीब निष्क्रिय बना दिया जिससे लोगों को विवश होकर उनके यहां नौकरी करनी पड़ रही थी। लेकिन यहां भी उन्हें शांति नहीं मिली क्योंकि कंपनी इन लोगों से काम अधिक कराती थी बदले में वेतन बहुत कम देती थी जिससे उन का गुजारा बहुत कठिनाई से होता था। जो गरीब थे वह और गरीब होते गए जिसकी वजह से ग्रामीण जीवन और कृषि में दिन प्रति दिन नयी-नयी समस्याएं पैदा होने लगी और किसानों को भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था। ब्रिटिश सरकार उनसे असहनीय हद तक कर वसूल करती थी और अवैध भुगतान पर मजबूर करती थी और उन पर तरह तरह के ज़ुल्म ढाती थी। यहां जमींदारी की जगह सरकार ने ले ली थी। कथनानुसार बिपिन चंद्रा:

> "अंग्रेजों ने भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन किए। लेकिन इन परिवर्तनों का उद्देश्य यह नहीं था कि भारतीय उत्पादकों के तरीके को अच्छा बनाया जाए ताकि उत्पादन में वृद्धि हो, किसानों की हालत संभले, उनका उद्देश्य तो केवल इतना था कि खेती की सभी बचत, मालगज़ारी की सूरत में प्राप्त कर ली जाए। "[2]

उन्नीसवीं सदी में हमारे उपन्यासकारों, पत्रकारों ने समाज सुधार पर ज्यादा जोर दिया। उन्होंने अपनी किताबों के जरिए समाज सुधार की बात की है। उन्होंने अपने उपन्यासों में उसी विषय को जगह दी है जो सामान्य जीवन और रोजमर्रा के हैं और चरित्र भी ऐसे हैं कि पढ़ने के बाद हर किसी को अपनी और अपने घर की कहानी मालूम हो। इस युग का सबसे बड़ा संकट उनकी वित्तीय स्थिति थी। जनता को कोई उपाय ही समझ में नहीं आ रहा था उससे कैसे निकले क्योंकि जमीन तो उनसे छिन गई थी, उस पर से लगान और फिर मनमानी कीमत पर किसानों की फसलों की बोली, इस सदी में किसानों की इसी शैली के हालात थे। एक अंश:

> "पिता के मरने के बाद घर के प्रबंधन का कुल भार उनके सिर पर आ पड़ा। मगर खर्चों से किस कदर संतोष था इसीलिए कि नवाब की सरकार से सात रुपया माहवार उनकी माँ को मिलता रहा। मगर दुर्भाग्यवश पूरा साल गुजर न पाया था कि नवाब करबलाए मुअल्ला चले गए और वहां जाकर दो ही महीने बाद निधन हो गया। अब यह इंटर क्लास में थे जब बाहर की आय बिल्कुल समाप्त हो गई तो रोजमर्रा के खर्चों के लिए घर संपत्ति बिकने लगी। यहां तक कि सोने चांदनी का सामान बिक गया तांबे के बर्तनों की नौबत आई, वह भी एक एक करके बिक गए।

यहां तक कि सिवाय दो तीन पतीलइयों और दो लोटों के कुछ बाकी नहीं रहा। यह अब तक स्कूल में पढ़ने जाते थे और सभी आशाऐं परीक्षा के पास होने पर निर्भर थीं। यहां तक कि परीक्षा का समय करीब आया। हेडमास्टर ने फीस मांगी तो पत्नी की चूड़ियाँ गिरवी रखकर दस रुपये फीस जमा किए। परीक्षा के दो दिन बाकी थे कि मां हैजा से पीड़ित हुईं और ठीक उसी दिन मर गयी जिस दिन उन्हें परीक्षा में भाग लेना था ।"[3]

एक तरफ तो ऐसे हालात थे तो दूसरी तरफ लोग एक-दूसरे को नीचा दिखाया के लिए उत्सुक दिखे। यहां तक कि एक दूसरे के खिलाफ षड्यंत्र को वैध मानते थे। कुछ लोग मुकदमेबाजी में एक दूसरे के खिलाफ साजिश में विशेषज्ञता रखते थे, ऐसे लोग समाज को खराब करने की पूरी कोशिश करते थे, क्योंकि यह पीड़ित को ही निशाना साधते थे।

इस समय के लोगों का धर्म पर विश्वास बहुत था। इसलिए धार्मिक व्यक्ति को बहुत महत्व देते थे। जिसकी वजह से कुछ स्वार्थी लोग उन्हें बेवकूफ बनाते थे और जब कोई जागरूक व्यक्ति ऐसे लोगों की पहचान कराता था तो उनसे लड़ने और मरने मारने तक उतर जाते थे। धर्म को वह असाधारण हद तक महत्व देते थे जिसकी वजह से वह अक्सर कठिनाइयों का सामना करते थे। पेश है एक अंश-

" खलीफा: वह तुम क्या जानो। हां, ऐसा ही मालूम हुआ होगा। शाह साहब कभी गलत नहीं कहेंगे।
खुर्शीद: यह कौन शाह साहब उल्लू के पट्ठे हैं।
खलीफा: ले बीस बीस। ज़बान संभाल के बातें करो। और जो जी चाहे करो.मज़ाक करो। शाह साहब के विषय में कुछ नहीं कहना।
नवाब: (गुस्सा गए)। यह क्या बेहूदगी है। एक सज्जन आदमी को व्यर्थ गालियां देना खुर्शीद ये बातें तुम्हारी हमे पसंद नहीं।
खुर्शीद : बहुत से ऐसे मिला सियाने देखे हैं। सिवाय धोखे और कोई बात नहीं।
खलीफा: सच है जैसा आदमी जैसा होता है उसे सब वैसे मालूम होते हैं। " [4]

जब गदर को आन्दोलन हो रहे थे तो जहां अंग्रेज शासक एक ओर भारतीयों पर हिंसा कर रहे थे तो कुछ ऐसे अंग्रेज शासक भी थे जो वास्तव में सहानुभूति रखते थे। वह जहां अंग्रेजों के इस कदम को भी गलत मानते थे वही भारतीयों द्वारा किए जा रहे अंग्रेजों की हत्या व लूटपाट भी सही मानते थे। उनका उद्देश्य केवल और केवल राष्ट्र की भलाई का होता था। नजीर अहमद ने इबनउल वकत द्वारा यह दिखाने की कोशिश की है।

" देखो, अत्याचारियों क्या बेजा हरकत की है। मालूम होता है कि शहर में बड़ी कठोर विपदा आने वाली है। खून अकारण कभी खाली जाए नहीं सुना। भगवान जाने शाहजहां ने कैसे मनहूस इतिहास में इस कम्बख्त शहर की नींव डाली थी कि शांति की कोई पूरी सदी इस बस्ती में ना गुजरी। मगर इस बार कुछ ऐसा समां नज़र आता है कि लोग नादिर शाह की घटना को भी भूल जाएंगे। "[5]

सांस्कृतिक स्तर पर सबसे अधिक संघर्ष इस दौर में देखने को मिलता है- रहन-सहन, पहनावा, आदतों, सलीके, विचारों आदि पर। जहां अंग्रेजी शासक भारत में अपनी सरकार जमाने के लिए चाहते थे कि कैसे भारतीयों पर अपनी सभ्यता की छाप छोड़ी जाए, वहीं भारतीय इसे सख्त नापसंद करते थे। वह दिन रात अपनी सभ्यता को बचाने के लिए चिंतित नजर आते हैं। लेकिन इसमें कुछ ऐसे भी थे जो इस सभ्यता में पूरी तरह से रंगना चाहते थे और कुछ तबका ऐसा था कि जो उनकी अच्छाइयों को ही केवल अपने जीवन में लाना चाहते था। जाहिर है कि जहां इस तरह के हालात होंगे वहां संघर्ष जरूर होगा। नज़ीर अहमद अपने उपन्यास इबनोलवकत में इस तरह का दृश्य प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि:

“कम से कम इस कदर कि अंग्रेजी विधि के अनुसार एक मकान हो। आप देखते हैं कि वे हमेशा विदेशी शहरी खुले हुए मकानों में रहना पसंद करते हैं और हम लोगों का तरीका और शैली भी अलग है। मेरे दोस्त तुम से मिलने के लिए कहते रहते हैं कई बार मन में आया कि आप के पास ले चलूँ। फिर सोचा कि आप उन लोगों से मिलने के लिए तैयार नहीं हैं।

अकारण लज्जा होगी। एक तो अपने मकान ऐसी गलियों में स्थित है कि वहां तक कभी जा नहीं सकते। फिर गलियां तंग और गंदी कि कोई साहब लोग जाना पसंद नहीं कर सकता। आपका मकान यद्यपि बुरा नहीं है, लेकिन साहब लोगों आसाइश के लिए मेज कुर्सी, आदि कोई सामान नहीं। इस कारण से मैं अपने कसी दोस्त अपके पास ले जाने की हिम्मत नहीं की। तो इस बारे में जैसी आप की अभिलाषा हो बयान कीजिए कि आप अंग्रेजों के साथ जिस तरह से है कि मैं चाहता हूँ मिलना पसंद है या नहीं?"[5]

उर्दू साहित्य की तरह हिंदी साहित्य में भी उन्नीसवीं सदी बहुत महत्व रखती है। अगर हम साहित्य के संदर्भ में बात करें या फिर भाषा के दृष्टिकोण से देखें तो इस बात में बहुत सच्चाई नजर आएगी। भाषा के आधार पर इसमें भारी बदलाव देखने को मिलता है। अगर हम साहित्य के संदर्भ में देखें तो पहली बार उसे जनता से जुड़ता हुआ पाते हैं। इससे जुड़े सारे विषयों जैसे उस समय मान व उसके संघर्ष, महिलाओं की स्थिति और उनकी समस्याएं, नए और पुराने मूल्यों, सांप्रदायिक टक्कर, किशोरो के सुधार, ज़ात पात आदि।

जितने भी सुधारात्मक प्रयत्न इस युग में देखने को मिलते हैं किसी और युग में देखने को नहीं मिलते। जैसे राष्ट्रीय सुधार से संबंधित प्रयत्न, शैक्षिक और सांस्कृतिक स्तर पर सुधार के प्रयास, सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक स्तर पर सुधार के प्रयास आदि। यह प्रयास एक आंदोलन के रूप में हमारे सामने आता हैं जैसे राजा राम मोहन राय (1774-1833) ने 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना की। इसमें उन्होंने धार्मिक और सुधारात्मक दृष्टिकोण को अपने आंदोलन का विषय बनाया। रवींद्रनाथ टैगोर (1818-1905) ने राजा राम मोहन राय के आंदोलन को विस्तार व मजबूती दी। केशवचन्दरसैन (1834-84) ने भी जनता और उससे जुड़ी हुई समस्याओं पर काम किया। इसके अतिरिक्त राम कृष्णपरमहंस आदि ने अपने अपने आंदोलनो में जनता को जगह दी। इन विचारकों के कारण ही आज हम लोग स्वतंत्रता की खुली हवा में सांस ले रहे हैं। अगर हम सार्वजनिक रूप से या राष्ट्रीय स्तर पर अपने आप को देखते हैं तो दूसरों से कही बेहतर पाते हैं। साहित्यिक दृष्टि से अन्य भाषाओं के साहित्य से अपने साहित्य की तुलना करें तो कुछ विषयों में हम उनसे कहीं आगे नजर आते हैं।

मुसलमानों के भारत में आगमन ने जहां यहां की संस्कृति को प्रभावित किया वहीं शैक्षिक, राजनीतिक, आर्थिक स्तर पर अंग्रेजों के आने से लोगों में एक बड़ा परिवर्तन देखा गया। लोग जहां परंपरागत धार्मिक शिक्षा को ही महत्व देते थे वही एक नई भाषा और एक नया साहित्य धीरे धीरे लोगों के दिलों में घर करने लगा, खासकर युवा पीढ़ी। यह तो सरे से ही उसका समर्थक बन गयी। हिंदी और उर्दू भाषाओं की जगह अंग्रेजी भाषा को प्राथमिकता दी जाने लगी। ज़ाहिर है कि एक नई भाषा नए साहित्य को सामने लाता है। चूंकि उस समय का साहित्य जनता से जुड़ा हुआ था जिसकी वजह से लोगों में एक नई सभ्यता, नई रोशनी और नई सोच व फ़िक्र का परिवर्तन देखा गया। जहाँ इस के कुछ नकारात्मक पहलू लोगों के सामने आए वही कुछ सकारात्मक पहलू से भी अवगत हुए। इसको कुछ लोग अपने धार्मिक विश्वासों में परिवर्तन मानते थे और सीखने और सिखाने पर आपत्ति करते थे, जबकि बुद्धिजीवी लोग इसकी उपयोगिता से लोगों को अवगत कराना चाहते थे तो ऐसे लोग तरह तरह का तर्क देकर मना कर देते थे वहीं कुछ बुद्धिमान इंसानों ने इस भाषा को बड़ी खुशी से स्वीकार किया क्योंकि वे जानते थे कि इसके महत्व क्या है। अंश:

मित्रो देखो! भारतवर्ष की कैसी दुर्दशा हो रही है। यहाँ के मनुष्य कैसे आलसी, कायर, और मूर्ख हो गए हैं। ये दोनों मनुष्य, जो वृक्ष के नीचे बैठे थे कैसी बाते कर रहे थे। एक ने कहा-"भाई हमारे लड़के को बहुत लोग कहिन कि अग्रेजी पढ़ाओ, पर हम नही पढ़ावा" दूसरे ने पूछा- काहे ? उसने उत्तर दिया - कि तु नाही जान्त्यो, देखो, राम चन्द्र अग्रेजी पढिन न, बेमजहब होथ गए। ऐसा सुना है कि अंग्रेज लोगों

के साथ- साथ लेथै, और थाक पोथिन बनाइन है, बहिमा लिखिन है कि अंग्रेजन के साथ खाय मे कोइ हरज नाही। ई किरिखतानी माता नाही, तो और का है?। दूसरे ने कहा- न हम अग्रेजी पढ़ा न हमारे पुर्खा लोग अंग्रेजी पढ़िन फिर जो ऊ पडिहै, तो का ओके हमहू लोगन से जादा अक्किल आय जेहे। इ सब बातन को सोच के हम ओके अग्रेजी -पारसी कुछ नही पढ़ावा, खाली अपना इल्म सिखाय दिया। दूसरे ने कहा- हा और का राम जी रक्खे चार दिन से सिखाने होय जैहै, तो अपना सब काम -काज तो लिकाल लेहिए, नाही तो पाच- छा: बरस अग्रेजी पढै, तबौ कोई काम का शहर न आवै।[6]

19 वीं सदी का भारतीय समाज पूरी तरह से पुराने रीति-रिवाज व धार्मिक विश्वासों में जकड़ा हुआ था। इससे जहां समाज का वातावरण खराब हो रहा था वहीं लोगों के बीच आपस में असहमति भी थी। इसे खत्म करने के लिए सर सैय्यद अहमद खान, राजा राम मोहन राय आदि ने जहां व्याख्यानों का सहारा लिया वहीं हमारे उपन्यासकारों नजीर अहमद, रतन नाथ सेरशार, अबदोलहलीम शरर, मिर्जा हादी रुसवा, श्रद्धा राम फिल्लौरी, किशोरी लाल गोस्वामी, राधा कृष्ण दास आदि ने अपनी पुस्तकों से समाज में फैली हुई बुराई को खत्म करने का प्रयास किए। इस आंदोलन का असर यह हुआ कि अब लोगों के विचारों में बदलाव आने लगा। पुराने रीति-रिवाजो में अब पहली वाली बात नहीं रह गई।

समाज में फैली बुराइयों का सबसे बड़ा कारण अशिक्षा को माना गया है। श्रद्धा राम फिल्लौरी अपने उपन्यास भाग्यवती में इन्हीं विषयों पर लिखा है और अपने उपन्यास भाग्यवती में एक जगह लिखा है कि शिक्षा समाज के लिए कितनी महत्वपूर्ण है:

"सासु ने कहा, ऐसी बहू ऐसे छोटे कामो की बला हाथ लगाती है। फिर यह निगोड़े नौकर दरमाहा काहे को पाते हैं। चलो तुम से कामकाज कराना हमको अच्छा नहीं लगता। तुम तो भगवान रखें। अभी कोमलगात और नई बहू हो। फिर क्या काम अभी से तुमको कुछ काम काज करने देंगी?

भाग्य वती बोली अय्या! नौकर चाकरो का होना तो बड़े घरों की शोभा है। भगवान ने तुमको तो दिया है, तुम आगे दिए जाती हो पर हम तो आपकी दासी ही हैं यदि अपने हाथ से अपना घर का काम कर लिया करोगी तो हमारा क्या घट जाएगा? फिर अपनी दूरानियों और ननद की ओर ताक के कहा कि हमारे बहू बेटी का कोमल गात तो तब भी शोभा पाएगा कि यदि घर का काम करेगी नहीं तो यह बात किस काम आएगा। नौकर चाकर चाहे कितने ही हो, पर कामकाज ऐसा अपने हाथ से ठीक होता है। वैसा तुम्हारे हाथ से नहीं होता। मैं तो इससे प्रसन्न हूं कि बाहर का काम काज तो नौकर चाकर किया करें और भीतर का कामकाज हम सब अपने मिलकर कर लिया करें। इससे दो फल देखती हूं। एक तो अपने हाथों में काम करने के शरीर आरोग रहता है और दूसरा अन्न, वस्त्र, आभूषण, बर्तन आदि पदार्थ से बिगड़ने नहीं पाते, जो लोग सदा निकम्मे में बैठे रहते हैं। ना तो उनका कोई काम ही पूरा होता है और ना ही उनके शरीर के आलस्य की ही निवृत्ति होती है कि जो सब व्याधियों का मूल है।"[7]

बालकृष्ण भट्ट ने ने नई पीढ़ी के सुधार का प्रयास किया है। उन्होंने उनकी शिक्षा और उनके नैतिक पहचान के बारे में अपने उपन्यास में लिखा है। उन्होंने लिखा है कि एक उम्र तक ही लोगों में सुधार हो सकता है। इसके बाद उसके सुधार में विभिन्न प्रकार की कठिनाई सामने आने लगती है।

बालकृष्ण भट्ट ने अपने उपन्यास के किरदारों के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास किया है कि भारत में मुसलमानों के आने से यहां का सामाजिक जीवन किस तरह से प्रभावित हुआ है। उन्होंने नैतिक पहचान को बचाने के लिए धर्म का सहारा लिया है। उन्होंने धार्मिक शिक्षा की बात की है कि एक डाकू धार्मिक शिक्षा के कारण कैसे उसमें सुधार आ जाता है।

" विनायक! तुम्ही क्या बहुतेरे इस संसार में इसी

अचरज और दु:ख में रहते हैं कि उनके मन का क्यों नहीं होता है?_पूर्व जन्म कर्म वासना रूप हो तो मनुष्य को सब ओर से जकड़े हुए हैं जो उस सक क्षण भर के लिए भी मुक्त नहीं किया चाहते। फिर यह जीव स्वयं प्रभु बनकर ईश्वर की इच्छा का कायल नहीं हुआ चाहता। देख रहे हैं कि इससे मृत्य योनि में आकर प्राणी मात्र बराबर काल के कलेवा होते जा रहे हैं। किंतु जो बचे हैं वह अपने को यही मानते हैं कि हम चिरस्थाई रहेंगे और उसी के अनुसार अपना सब प्रबंध करते जाते हैं। पर उनके मन की बहुत सी बातें पूरी होने से रह जाती है। आज सबको ग्रस लेने वाली मौत उनका अंत कर देती है। असंख्य धन बटोर चुके हैं। पुत्र, पौत्र, बहू, बेटियां से घर भरा हुआ है। दीर्घ जीवन में भी साठ-सत्तर के हो गए हैं, और संसार में भाग्यवानी की सीमा तक पहुंच गय, पर इतनी लालसा लगी रह गई है कि पौत्र के पुत्र को गोद में खिलाते सो ना हुई, मन की मानही में रही और चल बसे इत्यादि कितनों ही के मन की बातें नहीं होती देखी जाती। तो विनायक! तुम भी अपने को इस संसार में मत्यीनिसे से बाहर समझो।[8]

जैसा कि हम जानते हैं कि उर्दू और हिंदी दोनों भाषाओं के साहित्य के जन्म का अहद करीब एक ही है। दोनों ने बचपन से लेकर जवानी तक का सफर एक साथ तय किया। हिंदी उपन्यास में भी लगभग इन्हीं विषयों को पेश किया गया जो उर्दू उपन्यासकारों ने पेश किया है। अंतर केवल इतना है कि उर्दू उपन्यासकारों ने जिन विषयों को अपने उपन्यासों में जगह दी है वह इन विषयों को मुसलमानों के घरों से ढूंढ कर लाए हैं और ज्यादातर उपन्यासकार इसी वर्ग की खासकर के सुधार की बातें करते हैं वहीं हिंदी उपन्यासकार ने हिन्दुओं से जुड़ी परेशानी और उनके सुधार की बातें की हैं लेकिन यह प्रभाव हिंदी उपन्यासकारों के यहाँ अधिक अच्छे से दिखाई देता हैं।

उद्धरण सूची

1. तारीख रोज़नामचा, खलीक अहमद निज़ामी, नदवातुल मुसन्निफीन, दिल्ली, 1971, पृष्ठ 3
2. जदोजौत आजादी , बिपिन चंद्रा, पृष्ठ 23
3. शरीफ ज़ादा, मिर्जा हादी रुसवा, मकतबा जामिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 1994, पृष्ठ 14
4. वही, पृष्ठ 90
5. इबनोलवकत, नजीर अहमद,_मकतबा जामिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 1987, पृष्ठ 57
6. निःसहाय हिन्दू, राधाकृष्ण दास,_भारतीय विद्या प्रकाशन, बनारस,1890 , पृष्ठ 23
7. भाग्यवती, श्रद्धाराम फिल्लौरी,_हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस,1960, पृष्ठ 44
8. नूतन ब्रह्मचारी, बालकृष्ण भट्ट, हिंदी प्रदीप, प्रयाग, 1886, पृष्ठ 19

डॉ. मोहम्मद राशिद
सहायक प्राध्यापक, इस्तांबुल विश्वविद्यालय,
इस्तांबुल, तुर्की

3

सामाजिक विकास में विज्ञान और तंत्रज्ञान

प्रो.डॉ. अर्जुन चव्हाण

भूमिका :

कौन नहीं जनता कि हम विज्ञान के युग के नागरिक हैं, हम तंत्रज्ञान / प्रोद्योगिकी के युग के नागरिक हैं। विगत कुछ वर्षों में जिन दो संकल्पनाओं ने बल पकड़ा वे हैं विज्ञान – संकल्पना (Concept of Science) और तंत्रज्ञान – संकल्पना (Concept of Technology). पंडित मदन मोहन मालवीय 'राष्ट्रीय अध्यापक और अध्यापन अभियान' (PM MM NM TT) के तहत मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (HRD Ministry) की ओर से संकल्प है कि सामाजिक विकास से विज्ञान और तंत्रज्ञान को जोड़ा जाए। हम सब उच्च शिक्षा से जुड़े अध्यापक, छात्र, शोधकर्ता एवं शोध निर्देशक अपने दायित्व को देखें और उसे सामाजिक विकास से जोड़ें। अब गुफाओं, गिरि – कंदरों, हिमालय आदि पहाड़ों में बैठकर साधना – तपश्चर्या करने से काम नहीं चलेगा। उसके लिए अब प्रयोगशालाओं, ग्रंथालयों में दिन रात बिताने होंगे - सामाजिक आवश्यकताओं को केंद्र में रखते हुए, विकास को केंद्र में रखते हुए। विकास का अजेंडा ही अब जीत का जरिया बनता जा रहा है। वह विकास पूरे व्यक्ति का, समाज का, राष्ट्र का अथवा विश्व का हो सकता है। हमारे पूर्व शिक्षा मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास में विज्ञान एवं तंत्रज्ञान का महत्व रेखांकित करते हुए कहते हैं कि "हम इसलिए इन विश्वविद्यालयों को बना रहे हैं कि भाषा के जितने भी ग्रंथ हैं, उनमें ज्ञान और विज्ञान हैं, उसको यह पीढ़ी नए अनुसंधान के साथ पढे। यह लिखा हुआ है कि विज्ञान के साथ आगे बढ़े।"[1] सार यह कि अब विज्ञान तथा तंत्रज्ञान सामाजिक विकास के दो महत्वपूर्ण पहिये सिद्ध हुये हैं।

1. सामाजिक विकास की महत्त्वपूर्ण इकाइयाँ :

विश्व के विशाल प्रांगण में जैसे विकास की इकाइयाँ अनंत हैं वैसे सामाजिक विकास की इकाइयाँ भी अनंत हैं। इनको प्रमुख रूप से दो भागों में विभाजित करते हैं- (1) विज्ञान - इकाई (Unite of Science) (2) तंत्रज्ञान - इकाई (Unite of Technology). विकास के सारे साधन इन दोनों के अंतर्गत निहित हैं। वास्तव में सामाजिक विकास में विज्ञान और तंत्रज्ञान दोनों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। इतिहास गवाह है कि विज्ञाननिष्ठ समाज / राष्ट्र ही सर्वाधिक समृद्ध रहा। तंत्रज्ञाननिष्ठ समाज / राष्ट्र ही सर्वाधिक उन्नत और विकसित रहा, उदाहरण दुनिया के 10 सर्वश्रेष्ठ देश देखिये – अमरिका, रूस, फ्रान्स, जर्मन, जापान, आस्ट्रेलिया, इजरायल, चीन, सिंगापुर, मलेशिया। हमारे यहाँ वह समाज अधिक पिछड़ा रहा जहाँ ज्ञान – विज्ञान तंत्रज्ञान नहीं पहुँचा या देर से पहुँचा। वह समाज अधिक आगे बढ़ा जहाँ ज्ञान विज्ञान, तंत्रज्ञान सबसे पहले पहुँच गया। यही तथ्य और (सबसे से बड़ा) सत्य है कि ज्ञान, विज्ञान और तंत्रज्ञान के बिना आज विकास का कोई विकल्प नहीं। तंत्रज्ञान के साधनों ने हिंदी भाषा के विकास में जो योगदान किया उसने न केवल भारतीय बल्कि वैश्विक हिंदी समाज के विकास को भी गति प्रदान की। इन पंक्तियों के लेखक की मान्यता है कि "मीडिया, संगणक, ईमेल तथा इंटेरनेट

जैसे अधुनातन साधनों ने हिंदी के भीतर अवस्थित ज्ञान, विज्ञान, शास्त्रीय ज्ञान, आदि के भंडार को विश्व पटल पर मानव सभ्यता के लिए उपलब्ध कराने का अभिनय चलाया।"[3] आज उसी का फल विकसित समाज को नसीब हुआ है।

2. विज्ञान और सामाजिक विकास :

सामाजिक विकास की प्रक्रिया अनवरत और निरंतर है। उसकी गति कभी मंथर तो कभी तेज मिलेगी मगर समाज है तो विकसोन्मुख ही। उसी के आधार पर उसका वर्गीकरण कर अध्ययन किया जाता है और अनुसंधान भी, जैसे - अश्मयुगीन समाज, आदिम समाज, प्राचीन कालीन समाज, मध्यकालीन समाज, आधुनिक कालीन समाज, 21 वीं सदी का समाज, वर्तमान समाज, यंत्रज्ञान कालीन समाज और तंत्रज्ञान कालीन समाज आदि। एक और तथ्य रेखांकित करना होगा कि हर युग का समाज अपनी गति, मति और कृति के अनुसार विकसोन्मुख रहा है। विकास की प्रक्रिया निरंतर है। जी हाँ, विकास के गति की मात्रा कम – ज्यादा जरूर है, लेकिन विकास की प्रक्रिया में ज्ञान – विज्ञान ही आधारभूत है। विज्ञान का आविष्कार जितनी गति से हुआ, समाज का विकास भी उतनी गति से हुआ। जिस समाज और राष्ट्र में वैज्ञानिक अधिक पैदा हुए वह अधिक उन्नत एवं विकसित हुआ। जहाँ विज्ञान देर से पहुँचा वहाँ विकास भी देर से पहुँचा। इसके उदाहरण उसी क्रम से लक्षित होते हैं, जैसे - पहाड़ी समाज, आंचलिक समाज, जंगल निवासी समाज, गिरि – कंदर निवासी समाज, गाँव से बाहर निवासी समाज, ग्रामीण समाज, कस्बाई समाज, नागरी समाज या नगरीय समाज तथा महानगरीय समाज आदि। इस संदर्भ में एक और तथ्य रेखांकित करना जरूरी है कि जहाँ विज्ञान पहले / शीघ्र पहुँचा वहाँ विकास का अवसर भी पहले/ शीघ्र पहुँचा। भारत में विषम सामाजिक रचना का मूल यहाँ के ज्ञान - विज्ञान की प्राप्ति के अवसरों में मिलता है। इस तथ्य को स्वीकारना होगा कि ज्ञान, विज्ञान और तंत्रज्ञान सामाजिक विकास के अभिन्न अंग तथा साधन हैं।

3. विज्ञान क्षेत्र के समाज उपयोगी विषय :

विज्ञान के अंतर्गत अनंत विषय हैं, अनंत क्षेत्र हैं, जैसे - भौतिक विज्ञान / शास्त्र, रसायन शास्त्र, गणित शास्त्र, सांख्यिकी शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, पर्यावरण शास्त्र, जैवशास्त्र, कृषिशास्त्र, औषधि निर्माण शास्त्र, समुद्री विज्ञान शास्त्र, अभियांत्रिकी शास्त्र, शिक्षणशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र, मनोविज्ञान शास्त्र / मानस शास्त्र, भाषा शास्त्र, प्राणि शास्त्र, भूगोल शास्त्र, संगीत शास्त्र, नाट्य शास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, खगोल शास्त्र, भूगर्भ शास्त्र, गृह विज्ञान (home science) शास्त्र, पाक शास्त्र, समाज शास्त्र तथा शरीर शास्त्र आदि।

सामाजिक विकास में विज्ञान / शास्त्र के अंतर्गत आनेवाले सभी विषय महत्त्वपूर्ण हैं, इनके महत्व की मात्रा कम – ज्यादा हो सकती है। रामबानसल विज्ञाचार्य की मान्यता हैं कि "कभी सोने की चिड़िया कहलाने वाला भारत बर्बर तानाशाहों एवं लुटेरों के शोषण तथा कुसंस्कृति के अभिरोपण से विश्व के निर्धनतम् देशों में गिना जाने लगा हैं। ....विकास का अर्थ कुछ लोगों का सुविधा संपन्न होकर शोषक की श्रेणी में आ जाना मात्र हो गया है। ...अब समय आ गया हैं कि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं की एवं अपने आश्रितों की शिक्षा पर गंभीरता से विचार करे एवं अपने उपलब्ध साधनों से इसे सुशिक्षा की ओर मोड़े। देश में

अभाव ग्रस्ती निराकरण का यही एक मात्र उपाय हैं।"[2]

सामाजिक विकास में वैद्यक शास्त्र का योगदान सर्वाधिक मानना होगा। प्रारम्भ में समाज में बीमारी संबंधी अज्ञान मूलक इलाज थे। जड़ी – बूटियों का प्रयोग बीमारी भगाने में होता रहा। बीमारी के उपचार की अजीबोगरीब पद्धतियाँ रूढ थीं, उदाहरण भूतबाधा, मांत्रिक, भभूत देना आदि। वैद्यशास्त्र के विकास ने समाज को विज्ञाननिष्ठ बना दिया। व्यक्ति का आयुर्मान बढ़ गया। अवसतन उम्र बढ़ गई। भयावह बीमारियां भी अस्तित्व में आ गई। उनके इलाज भी खोजे गए। उदाहरण के लिए कैंसर, स्वाइनफ्लू, एड्स और कोरोना जैसी लाइलाज बीमारियों पर वैद्यकशास्त्र निरंतर अनुसंधान कर सफल होता जा रहा है। उड़े हुए प्राण वापिस लाने में सफलता मिलने की आशा वैज्ञानिकों को होने लगी है इसीलिए अमेरिका में 'डेड बॉडी' का पंजीकरण करनेवाली एजेंसियाँ खुल गई हैं। लोग जीते जी अपनी बॉडी का पंजीकरण करवा रहे हैं ताकि मरने के बाद भी जीने के लिए दूसरी 'यूनिंग' मिले। अरबों रुपये लेना, डेड बॉडी का पंजीकरण करना, उसपर पूरे पते का लेबल लगाना, अच्छे से पैकिंग करना और ऊपर अन्तरिक्ष में वहाँ तक ले जाकर छोड़ना जहाँ धरती की गुरुत्वाकर्षण शक्ति काम नहीं करती। यह इस लिए है कि अब वैज्ञानिकों को अंदेशा हुआ है कि आज नहीं तो कल मृतक की जान को वापिस लाने में सफलता मिलेगी। जिस दिन इसमें कामयाबी मिलेगी उसी दिन अन्तरिक्ष में यान भेजा जाएगा और ऊपर छोड़ी गई डेड बॉडियाँ नीचे लाई जाएँगी, उनमें जान (प्राण) भर देंगे और जीवित होकर वे दूसरी पारी की जिंदगी जिएंगे। सार यह कि विज्ञान की उपयोगिता सर्वोपरि है और कल्पनातीत।

4. सामाजिक विकास में कृषि का योगदान –

सामाजिक विकास, स्वास्थ्य और समृद्धि में कृषि क्षेत्र का योगदान सब से ज्यादा स्वीकारना पड़ेगा। अनेक वैज्ञानिकों ने सारी जिंदगी कृषि संबंधी शोध कार्यों में बिता दी, जैसे- अनाज की पूर्ति / खाद्यान्न की पूर्ति, कृषि विषयक अनुसंधान का फल है, उदाहरण के लिए अनाज में चावल, गेहूँ, मक्का, बाजरा, जवार, हैब्रिड आदि। उदाहरण फलों में = अंगूर, अनार, अनन्नास, आम, आमरूद, कटहल, चीकू, नारियाल, नीबू, बेरन और मुसंबी आदि। उदाहरण गन्ना उससे गुड, शक्कर और शक्कर के अलग अलग प्रकार। उदाहरण सब्जियाँ = आलू, प्याज, बैंगन, तोरली, कद्दू, ग्वार, करेला, गोभी, फ्लावर, मेथी, पालक, धानियाँ, साग आद। तिलहनों में = तील, सूरजमुखी, मूँगफली, कपास (कॉटन), राई, सारसो, रेहण्डी आदि।

हमारे देश के लिए यह गौरव की बात है कि यहाँ एक – एक ऐसे राज्य हैं जो पूरे राष्ट्र को साल भर का अनाज दे सकता है। उदाहरण के लिए पंजाब का चावल, गेहूँ, मध्यप्रदेश का गेहूँ, महाराष्ट्र का गन्ना, गुजरात की मूँगफली, कश्मीर के सेब पूरे देश को वितरित कर सकते हैं। कृषि संबंधी शोध कार्य और क्षेत्रीय जल, जमीन, हवा और वैज्ञानिक सोच के कारण आज हम समृद्धि की ओर अग्रसर होने लगे हैं।

5. तंत्रज्ञान और सामाजिक विकास (Technology and Social Development)

वास्तव में 'तंत्रज्ञान' अवधारण नई है लेकिन उसका अस्तित्व हमारे यहाँ पुराना है। उदाहरण के लिए हमारे यहाँ देववाणी, आकाशवाणी, भविष्यवाणी जैसी शब्दावलियाँ सदियों से प्रचलित रही हैं । पुष्पक विमान की संकल्पना 'रामयण' काल से है। राम द्वारा लंका जाने के लिए सागर पर सेतु

निर्माण कार्य 'रामायण' काल के तंत्रज्ञानसे सम्पन्न हुआ है। महाभारत काल में 'लाक्ष्यागृह' निर्माण से वास्तुशास्त्र तंत्र का बोध होता है। लखनऊ के बड़ा ईमाम बाड़ा में बनी दीवार में कान हैं, कान लगाने पर दूरभाष का बोध होता है जो तत्कालीन तंत्रज्ञान ही है।

तंत्रज्ञान की प्रक्रिया निरंतर है

हमें याद रखना होगा कि समाज हो चाहे तंत्रज्ञान, दोनों निरंतर विकसोन्मुख हैं। उदाहरण के लिए आटा पीसने हेतु पत्थर की चक्की (जो आज बिजली पर चलती है) ऊखली, मुसाली, सील- बट्टा ये सब पुराने जमाने के 'मिक्चर' ही थे। ठंडे पानी के लिए, दही, दूध ताजा रखने के लिए मिट्टी की बनी मटकी पुराने जमाने का इंडियन फ्रिज ही था। प्रारम्भिक युग में कुटियाँ, झोपड़ियाँ थीं, फिर काठघर, घर, बाड़ा, मकान, हवेली, महल और आज कल फ्लैट, बँगलों का निर्माण गृह निर्माण के विकसोन्मुख तंत्रज्ञान के ही परिचायक हैं। तब के मकान की सीढ़ियाँ देखे और अब मॉल की, हवाई अड्डे की सीढ़ियाँ और लिफ्ट। गिनती के लिए पुराने जमाने में बनिया की बही, खाता, टिप्पणियाँ देखे, गणक देखे और आज का संगणक। इन सब का इतिहास तथा विकास तंत्रज्ञान की निरंतर प्रक्रिया को दर्शाता है। कहना जरूरी नहीं कि तंत्रज्ञान विकास की ओर अग्रसर है।

6. तंत्रज्ञान के आद्यतन रूप

तंत्रज्ञान नाम एक लेकिन उसके रूप अनेक हैं। विकसित समाज की कल्पना आज उसके बिना संभव नहीं। मानव जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं जहां उसने प्रवेश न किया हो। आज वह दृश्य एवं अदृश्य रूपों में मौजूद है। तंत्रज्ञान अपने विकसित नए-नए रूपों में अस्तित्व में आया है। अब इस तथ्य को नकार नहीं सकते कि उसके इन रूपों में निरंतर अभिवृद्धि हो रही हैं। वर्तमान काल में तंत्रज्ञान के कुछ प्रमुख रूप इस प्रकार हैं - संगणक, टैब, लैपटॉप, इंटरनेट, ई- मेल, वाइस मेल, विविध सॉफ्टवेयर, विविध ऐप, जनसंचार माध्यम (मीडिया), दूरध्वनि / दूरभाष, मोबाईल (भ्रमणध्वनि), स्मार्ट या एन्ड्राइड मोबाईल आदि। आज ऐसा मोबाईल बाजार में सहजता से उपलब्ध है जिस पर हम बोलते जाते हैं और सारा भषण – संभाषण टाईप / टंकित होता जाता है। टंकण मशीन की छुट्टी इसी मोबाईल ने कर दी है। पहले उसने संगणक और लैपटॉप की छुट्टी तो कर ही दी थी। सचित्र बातचीत करना, टंकण करना, रेकोर्डिंग करना, फोटोग्राफी करना, ई मेल की मदद से सैंकड़ों पन्नों की सामग्री भेजना – पाना आदि सब कुछ इससे संभव हो रहा है। वाय फाय, लाय फाय और किस्म किस्म के ऐप ने तंत्रज्ञान को बाजीगर बना दिया है। अब तक ए टी एम से पैसा पाते थे, अब दूध और पानी तक पाने लगे हैं। तंत्रज्ञान के सारे साधन उत्तरोत्तर विकासोन्मुख हैं। सार यह कि तंत्रज्ञान का आज का 'अपडेट' रूप कल 'आउट ऑफ डेट' होता जा रहा है। उसके रूप स्वरूप में अभिवृद्धि होती जा रही है। यह मानव मस्तिष्क की उपलब्धि है। संगणक के विज्ञ विजयकुमार मलहोत्रा की मान्यता हैं की "आधुनिक टेक्नालॉजी" के विकास में कम्प्यूटर का आविष्कार एक युगांतकारी घटना हैं। आज कम्प्युटर टेक्नालॉजी का उपयोग जीवन के सभी क्षेत्रों में किया जा रहा हैं।"[4] स्पष्ट हैं की संगणक भी तंत्रज्ञान का एक महत्वपूर्ण साधन सिद्ध हुआ हैं जिसने सामाजिक विकास मैं अपनी अहमियत साबित की हैं।

7. सामाजिक विकास में तंत्रज्ञान की भूमिका

वर्तमान समाज का विभाजन हम दो भागों में कर सकते हैं जिसका अधर तंत्रज्ञान ही है, जैसे - (1) तंत्रज्ञान साक्षर समाज (2) तंत्रज्ञान निरक्षर समाज। पहले मानव की बुनियादी जरूरतों में तीन चीजें अहम थीं – रोटी, कपड़ा, मकान और तंत्रज्ञान आज चौथी जरूरत बनी है। इसीलिए सामाजिक विकास में

तंत्रज्ञान की भूमिका निम्नांकित पंचसूत्री में प्रस्तुत है –

1. तंत्रज्ञान समाज जीवन का अभिन्न अंग तथा साधन है।
2. समाज का हर तबका आज तंत्रज्ञान से लाभान्वित है।
3. व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और पूरा विश्व आज तंत्रज्ञान का कायल है।
4. तंत्रज्ञान के बिना सामाजिक विकास की कल्पना अधूरी है।
5. भौतिक और बौद्धिक विकास में इसने अहम भूमिका निभाई है।

8. समाज के विभिन्न क्षेत्रों में तंत्रज्ञान का उपयोग

समाज जीवन का शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र होगा, जहाँ तंत्रज्ञान का उपयोग या प्रयोग न हो। जीवन से संबन्धित हर क्षेत्र ने तंत्रज्ञान से लाभ उठाया है। आज मानव समाज से संबन्धित अनंत क्षेत्रों में तंत्रज्ञान का प्रवेश तथा उपयोग हैं, जिनमें से प्रमुख हैं - कृषि क्षेत्र, शिक्षा क्षेत्र, अनुसंधान क्षेत्र, वैद्यक क्षेत्र, पर्यटन क्षेत्र, अभियांत्रिकी क्षेत्र, व्यापार क्षेत्र, वाणिज्य क्षेत्र, रक्षा क्षेत्र, जनसंचार क्षेत्र, क्रीडा क्षेत्र, मौसम क्षेत्र, यातायात क्षेत्र, ज्योतिष क्षेत्र, सामाजिक क्षेत्र, धार्मिक क्षेत्र, सांस्कृतिक क्षेत्र, साहित्यिक क्षेत्र, आर्थिक क्षेत्र आदि। सारांशतः कहना सही होगा कि अब शायद ही कोई क्षेत्र मिलेगा जिसने तंत्रज्ञान से लाभ न उठाया हो।

9. सामाजिक विकास में विभिन्न 'एप्स' का उपयोग :

कौन नहीं जनता कि 'एप्स' का निर्माण भी सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रयोजन से हुआ। वास्तव में जिसका निर्माण विशिष्ट सुविधा की प्राप्ति के लिए किया गया है और जिसके प्रयोग से विशिष्ट कार्य करने की सुविधा मिलती है, 'एप' कहलाता है। 'एप्स' की निश्चित संख्या बताना असंभव है, क्योंकि उसमें दिनों दिन अभिवृद्धि हो रही है। अगर हम आज दिनांक 11 सितंबर, 2019 को दोपहर के बारह बजे 'एप्स' की संख्या दो सौ बताएँगे तो बारह बज कर एक या दो मिनट बाद यह संख्या कालबाह्य होगी। हो सकता है इसमें एक या एक दर्जन 'एप्स' की बढ़ोतरी हुई हो। विभिन्न भाषाओं में इनकी संख्या भी विभिन्न मिलती है। 'एप्स' का विकास एवं निर्माण निरंतर है। तंत्रज्ञान का चरम विकास अब 'एप्स' के जरिए देखा जा सकता है। आज 'एप्स' अनगिनत हैं और असीम। आज की तारीख में "1.96 मिलियन, अर्थात करीब 20 लाख एप्स 'एपल प्ले स्टोर' में डाउनलोड करने के लिए उपलब्ध हैं।"[5] इसके अलावा " 'गुगल प्ले स्टोर' में डाउनलोड करने के लिए (2.87मिलियन) करीबन 30 लाख एप्स उपलब्ध हैं।"[6] एक और तथ्य स्पष्ट हुआ हैं कि "10 लाख लोगों में से इक्कीस प्रतिशत लोग हर दिन 50 से अधिक बार एप्स देखते हैं।"[7] तात्पर्य यह कि एप्स की संख्या लाखों करोड़ों के पार होने के कारण उसकी निश्चित संख्या बताना संभव नहीं है। रोजाना जीवन में जो बहुत अधिक चर्चित एप्स हैं उनमें से कुछ महत्वपूर्ण इस प्रकार है –

1. फ़ेसबुक (Facebook App)

दुनिया में "फ़ेसबुक को 500 करोड़ प्रयोक्ता डाऊनलोड कर इसका प्रयोग कर रहे है।"[8] 'फेसबुक' वर्तमानकाल का सबसे पसंदीदा एप सिद्ध हुआ है। इसे जनसंपर्क का महामार्ग कहना होगा। इसके जारिए दुनिया भर का समाज एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है। अपने घर में बैठ कर दुनिया के किसी भी कोने में स्थित व्यक्ति अथवा समाज से किसी भी विषय से संबंधित जानकारी 'पोस्ट' (post) करना, विशेषतः

खूबसूरत फोटो डलवाना आदि के लिए इसका प्रयोग होता है। खास कर युवा वर्ग द्वारा अधिक प्रयुक्त किए जाने वाले 'एपों' में 'फेसबुक' अग्रणी है। 4 अक्तूबर, 2021 को सिर्फ 6 घंटे यह बंद था जिसकी वजह से इसके स्वामित्वधारी श्री जुकर बर्ग के 300 करोड़ डॉलर के नुकसान की यह खबर इस साल की अहम घटना रही। तात्पर्य यह कि सामाजिक विकास में यह एक महत्व पूर्ण एप हैं।

2. वाट्सएप (What's App)

'वाट्सएप' सर्वाधिक मशहूर 'एप' है। इसके प्रयोक्ता भी खूब हैं। यही वह 'एप' है जो जानकारी का खजाना बना है। यह इंस्टेंट मेसेज देता है। इसके जरिये पलभर में ढेर सारी सामाग्री पा सकते और भेज सकते हैं। इससे वी डी ओ कॉलिंग भी कर सकते हैं। जन संपर्क का सरल सुलभ साधन होने के कारण प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सामाजिक विकास में इसकी अहमियत दिनों दिन बढ़ती जा रही है।

3. टेलीग्राम (Telegram)

यह एक ऐसा एप हैं कि जिसके जरिये लाखों के समूहों को एकसाथ संपर्क किया जा सकता हैं। इसका प्रयोग करना भी आसान हैं। इसके जरिये एक-दूसरे के दस्तावेज़ भेज सकते हैं, महत्वपूर्ण, बड़ी क्षमता की फ़ाइल भेज सकते हैं। समाचार भी पढ़ सकते हैं। टेलीग्राम दो प्रकार से चलाया जाता हैं। सार्वजनिक चैनल और निजी चैनल। आजकल शिक्षा क्षेत्र में इसका प्रयोग खूब हो रहा हैं। टेलीग्राम के माध्यम से समूह बनाकर समाज के लाखो लोगों से संपर्क बनाकर शिक्षा संबंधी सामग्री तथा समाज उपयोगी सामग्री पहुंचाई जा सकती हैं। सामाजिक विकास में इसका उपयोग करवालेना दिन ब दिन बढ़ता जा रहा है।

4. ट्विटर (Twitter App)

यह भी एक अत्यंत लोकप्रिय एप है। दुनिया के बड़े-बडे नेता, अभिनेता, समाज सुधारक, विचारचिंतक आदि इसका प्रयोग करते हैं। किसी विषय को लेकर अपना अभिमत टंकित कर इसके जारिए पोस्ट करने की सुदीर्घ परंपरा है। इसका उपयोग भी सामाजिक हित और लोक प्रबोधन के लिए किया जा सकता है। कहीं-कहीं इसके जरिए 'ट्विट' करने से बड़े विवाद भी खड़े हुये हैं।

5. इंस्टाग्राम (Instagram)

दुनिया में "100 करोड़ से अधिक लोग डाउनलोड कर इसका प्रयोग कर रहे हैं।"[9] यह एक ऐसा एप हैं जो फोटो तथा वी.डी.ओ निजी तौर पर या सार्वजनिक रूप से साझा करने की सुविधा देता है। इसके प्रयोक्ता की संख्या भी खूब हैं। इसपर भी किसी भी विषय को लेकर पोस्ट करने की सुविधा है। जन संपर्क के जरिये समाज के विकास के साधन के रूप में इसका भी प्रयोग हो सकता हैं।

6. स्कायप एप (Skype App)

यह 'एप' वी डी ओ कालिंग में अधिक उपयोगी है। जन संपर्क का एक प्रभावी साधन है। शीघ्रता से संवाद के लिए उपयुक्त है। कम समय में संवाद स्थापित कर सामाजिक विकास को गति प्रदान करने में इसका खासा उपयोग हो रहा है।

7. वेर इज माय ट्रेन एप (Where is my train)

इससे रेल संबंधी सारी जानकारी मिलती है। रेल का मार्ग, समय, अंतर आदि का पता चलता है। आरक्षण की स्थिति की जानकारी मिलती है।

न्यूज़ एप (News app)

यह समाचार जगत से जुड़ा 'एप' है। इससे समाचार जगत के सारे संचार माध्यमों के समाचार पाने की सुविधा है। यह खबरों का खजाना खोल देता है।

8. होटस्टार एप (Hotstar app)

सारे न्यूज़ प्रस्तुत करता है। सारे धारावाहिक (सिरियल्स) दिखलाता है। इससे मुविज / फिल्म देखने की सुविधा उपलब्ध है। क्रीडा से वाकिफ कराता है। तत्संबंधी अद्यतन स्थिति दर्शाता है।

9. कैम स्कैनर एप (Cam scanner app)

यह अपने दस्तावेज़ का स्कैन करने में उपयुक्ता है और उसे सुरक्षित तथा संग्रहीत रखने में मदद करता है। इससे स्कैन किए दस्तावेज़ जब चाहे पा सकते हैं। रंगीन दस्तावेज़, छायाचित्र मूल रूप में सुरक्षित रख सकते हैं।

10. गेम्स एप (Games app pab g)

इसने अनेक युवाओं को अपने प्रति खींच लिया है। इसे युवकों ने हद से ज्यादा चाहा। अभिभावकों द्वारा माना करने पर कई युवकों ने खुदकुशियाँ की हैं।

11. गूगल एप (Google App)

सभी प्रकार की जानकारी खोजना, उपयुक्त सामग्री 'सर्च' करना, दुनिया की सारी अज्ञात चीजें पता करना इसी से संभव है। अज्ञात की तलाश इसी की उपलब्धि है। साधनों को जुटाने का इन दिनों का सबसे आसान साधन गुगल ही सीधा हुआ है।

12. पे टी एम एप (Paytm)

यह आर्थिक क्षेत्र से संबंधित है। इसका प्रयोग भुगतान करने - पाने आदि के लिए होता है। यह जीवन की प्राथमिक आवश्यकता से जुड़ा है। इंस्टंट ऑन लाइन पेमेंट के लिए यह सबसे अधिक उपयुक्त।

13. ब्यूटी प्लस एप (Beautiplus app)

युवा वर्ग का चहेता एप है। इसका निर्माण खूबसूरत फोटो के लिए किया गया हैं। लेकिन इसके फोटो कृत्रिम लगते हैं (artificial photos)

14. यू ट्यूब एप (Youtube)

यह भाषणों का वी.डी.ओ पहुँचाने-भेजने में उपयोगी है। छोटी-छोटी फिल्मे भेजने के काम में उपयुक्त है। घटनाओं, प्रसंगों के दृश्यों को भेजने में उपयोगी है। वी.डी.ओ ही नहीं बल्कि शूटिंग भेजने में भी यह तत्पर है।

सारांश यह कि एप्स ने 'स्पेस' को ही नहीं बचाया बल्कि समय, श्रम एवं पैसा भी बचाया। इसने आपसी सामाजिक, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय दूरियों को मिटाया है। 'कर लो दुनिया मुट्ठी में' जैसा तगड़ा संदेश दिया है और अवसर भी।

10. ज्ञान – विज्ञान - तंत्रज्ञान का विकास के साथ विनाशकारी दुरुपयोगी भी :

हम इस कड़ुवे सच को नजरअंदाज नहीं कर सकते कि ज्ञान, विज्ञान, तंत्रज्ञान का विकास के साथ-साथ विनाश के लिए भी प्रयोग किया गया सिद्ध हुआ है। इसके सदुपयोग के साथ-साथ दुरुपयोग भी हुए हैं। इसे देखते हुए देश के प्रथम प्रधानमंत्री नेहरू जी का यह कथन याद आता है कि 'विज्ञान' वरदान है और अभिशाप भी। यह हम पर निर्भर है कि हमें उसका प्रयोग किस लिए करना है? जैसे -

- बिजली का एक बटन दबाने से ठंडा पानी मिलता है, दूसरा दबाने से गर्म पानी मिलता है और उसके तार को पकड़ने से मौत।
- अस्पताल में ऑपरेशन के समय घंटों बिजली काम आती है और वहीं 'डेड बॉडी' को भस्म करने के लिए चंद मिनट ही लेती है।

- नींद की गोलियाँ, बेहोशी के इंजक्शन, आत्मरक्षा के लिए बंदूक, अणुबम, अनवस्त्र आदि के दुरुपयोग से हुआ विनाश छिप नहीं सका है।
- नामांकित शहर पुणे (महाराष्ट्र) में कुछ साल पहले हुए सर्वेक्षण से पाया गया कि एक साल में हुई साठ प्रतिशत शादियाँ 'वाट्सएप्' के प्रयोग के कारण टूट गईं। क्योंकि दाम्पत्य जीवन में तीसरे के आगमन का संदेह 'वाट्सएप' से परिपुष्ट हुआ था।
- फेसबुक और ईमेल अकाउंट की गोपनीयता खत्म होने से 'यूजर' की जिंदगी खत्म होने के उदाहरण कम नहीं मिलते।
- 'गर्भजल परीक्षण' / गर्भ के सक्षम, स्वास्थ्य सम्पन्न होने न होने के प्रयोजन से निर्मित था किंतु उसका प्रयोग 'गर्भलिंग' परीक्षण हेतु कराया और बेटियों के गर्भ ही गिरवाते रहे। बेटों के अनुपात में बेटियों की आबादी घटती गई इसे कौन नहीं जानता ?
- यदि ऐसा न होता तो हमारे देश में 'बेटी बचाओ' जैसा अभियान शुरू करने की न नौबत आती और न ही सोनोग्राफी मशीनें सील की जाती।
- सार यह कि हमारे समाज में ज्ञान – विज्ञान – तंत्रज्ञान का दुरुपयोग भी होता रहा। यह निश्चय ही विकास की अपेक्षा विनाशकारी है जिसे रोकना स्वस्थ समाज के लिए आवश्यक है और अनिवार्य भी। लेकिन यह कार्य आसान नहीं। यह न केवल समाज और देश के लिए विकास में भयंकर समस्या है अपितु दुनिया के विरोध में भी। इस चुनौती का कैसे सामना करें यही सब से बड़ी चुनौती है।

निष्कर्ष :

ज्ञान – विज्ञान – तंत्रज्ञान आदि मानव मस्तिष्क की उपज है। इससे मानव समाज को विकास की संजीवनी मिली रही है। इससे वह सदा विकसोन्मुख रहा है। सुविधाओं ने उसे समृद्ध तथा सम्पन्न जीवन बहाल कराया। इससे उसका हौसला बुलंद होता गया। मुंह या रोजगार तथा रोजी रोटी की समस्या का स्थान अब सुख – साधनों ने पा लिया। इसका सारा श्रेय विज्ञान और तंत्रज्ञान को ही देना पड़ेगा। 'कर लो दुनिया मुट्ठी में' का संदेश देनेवाले इस दोनों क्षेत्रों का अंतिम तथ्य इस सत्य को स्थापित करता है कि सामाजिक विकास की कोई अंतिम सीमा नहीं। वह निरंतर चलनेवाली है और करवटें बदलनेवाली है तो महज अनवरन कोशिश ही। बस समाज की भलाई, समाज कल्याण और समाज उन्नयन उसका अंतिम प्रयोजन हो तो उस विश्व का भी भला होगा, जिसके हम सब निवासी हैं।

संदर्भ सूची :

1. गिरिराजशरण अग्रवाल सं. शोध दिशा, पियर रिव्यूड शोध पत्रिका, अंक 49, जून – सितंबर, 2020, पृष्ठ 29
2. राम बंसल विज्ञाचार्य, प्रारंभिक कम्प्यूटर शिक्षा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000, प्राक्कथन से उदधृत,
3. अर्जुन चव्हाण, विश्वमंच पर हिंदी : विविध आयाम, अमन प्रकाशन कानपुर, 2021, पृष्ठ 15
4. विजय कुमार मलहोत्रा, कम्प्यूटर के भाषिक अनुप्रयोग, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 1998, पृष्ठ 79

5. https://buildfire.com/appstatistics/#:~:text=Key%20Mobile%20App%20Statistics&text=The%20Apple%20App%20Store%20has,on%20the%20Google%20Play%20Store
6. https://buildfire.com/app-statistics/#:~:text=Key%20Mobile%20App%20Statistics&text=The%20Apple%20App%20Store%20has,on%20the%20Google%20Play%20Store
7. https://buildfire.com/app-statistics/#:~:text=Key%20Mobile%20App%20Statistics&text=The%20Apple%20App%20Store%20has,on%20the%20Google%20Play%20Store
8. https://play.google.com/store/apps/details?id=com.facebook.katana

https://play.google.com/store/apps/details?id=com.instagram.android

प्रो.डॉ. अर्जुन चव्हाण
पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर, महाराष्ट्र

4 Indian Culture in the works of Abu Rayhan Biruni

Umida Kuranbaeva Sultannazarovna

As every nations' living place, climate, names of months and days are different, the same notion can be mentioned in its pious events and holly days.

They celebrate it in a manner that was derived from their ancestors, like using their expected cosmetics, wearing national old-fashioned clothes and enjoying every minute of that event.

As time inherently passes, it's an absolutely natural notion that changes in such events can't be avoided, due to the differentiating climate and weather.

Central Asian, Asia and Middle East Nations from the very old times have always lived in a close neighborhood, so that can be caused that too many similarities in their cultures and religious events. Till the present time, the works by Abu Rayhan Biruni about history, ethnographies, chronologies, toponymies, calendars, holidays and religious events of the nations mentioned above, takes one of the main places in research works.

The full name of the scientist is Abu Rayhan Muhammad bin Ahmad Biruni (973-1048). According to many Muslim sources of the 10th – 13th centuries (Yakut al-Hamavi etc.) he was born in Khwarezm, in his capital city Kath of the Khwarezmshah era - Afreghids. According to Nawal Balawi, a Pakistani scientist, Biruni's works were more than 180[1]. Unfortunately, only 33 of these works have come to us[2]. The well-known orientalist, academician I.Yu.Krachkovsky gives a high appraisal to Biruniy's legacy and says, "It is easier said than not to enumerate the areas of science he is engaged in"[3]. Biruni is a great scientist-astronomer, geographer, mineralogy, ethnography, history and poet of the medieval East. He is one of the scholars who differentiate people according to their nationality, convictions and positions.

Before starting to write one of his most famous works, which have come down to our days, - "Kitab fi tahqiq ma li-l-Hind min maqula maqbula fi al- 'aql aw mardhula" ("The book

---

[1] Ghurrat al-Zijat or Karana tilaka. Institute of sindhology university of sind. Sind, -Pakistan. 1973. – P. 68; Boilot D. J. L' Oeuvre d'al – Beruni, essai bibliographique. Caire, 1955. – P. 290-311.

[2] Abu Rayhan Beruni. Pamyatniki minuvshih pokoleniy / Perevod M. Sale. Dop. isp. podgotovka k pechati, vvodniy tekst A. Ahmedova. T. I. Tashkent: Fan. 2015. – S. 35-36.

[3] Krachkovskiy I. Yu. (1957). Izbrannie sochineniya. T. IV. Moskva-Leningrad, 1957. –S. 247.

containing an explanation of the teachings belonging to the Indians, acceptable by or rejected" by "India" 1030[4].) Biruni thoroughly and thoroughly studied the science, culture and lifestyle of the Indian people.

The first data related to Indians are cited in such works as "al-Athar al-baqiya min al-qurun al-khaliya", ("The Chronologi of Ancient Nations" or "Chronology")[5], "Kitab at-tafhim li'avail Sina'at at al-tanjim" ("Introduction to Astrology" or "Astronomy")[6] and "Al-Kanun al-Mas'udi" (" Masudic Canon" 1037)[7]. When studying the history of Indians Biruni, collected information about these people before the trip to India, which are reflected in his previous "India" writings.

There were too many scientists before Abu Rayhan Biruni, who were interested in traditions of Hindoos, who were living in the territory of India and other countries. Aiming to restate above mentioned point, I can exemplify Muhammad ibn Muso Kharezmee (year of death 847), after receiving expected level in a science, was interested in Hindoos' math and geography[8].

It can be pointed out that the Indians' math, astronomy, botanics, history and culture were gradually introduced in almost every research work by Abu Rayhan Biruni.

So, what works can be found the information about the culture and religious holidays in?

The chronology of different peoples, the names of months, holidays, traditions, religion, culture, genealogies of kings, prophets and false prophets are described in the work "Al-Asar al-Baqiya min al-Qurun al-Khaliya", written in 1000-1003. In addition, in this work we can find information about Indians living in India and other countries.Furthermore, we can come across with information about the Indians living in India and other countries in this works. The way of celebration of hindoos' holidays is described like this: "The second equinox, which suits the

---

[4] Abu Rayhan Beruni. Tanlangan asarlar. T. II. Tashkent: Fan, 1965. – B. 7; Matvievskaya G.P., Rozenfeld B.A. Matematiki i astronomi musulmanskogo srednevekovya i ix trudi (VIII - XVII vv.). T.2. Moskva: 1983. – S. 266.

[5] Abu Rayhan Beruni. Qadimgi xalqlardan qolgan yodgorliklar. Tanlangan asarlar. T. I. Tashkent: O'zbekiston, 2020. – B. 23; Matvievskaya G.P., Rozenfeld B.A. Matematiki i astronomi musulmanskogo srednevekovya i ix trudi (VIII - XVII vv.). T.2. Moskva: Nauka, 1983. – S. 265.

[6] Abu Rayhan Beruni. Tafhim. Tanlangan asarlar. T. IV. Toshkent: Fan, 2006. – B. 6; Matvievskaya G.P., Rozenfeld B.A. Matematiki i astronomi musulmanskogo srednevekovya i ix trudi (VIII - XVII vv.). T.2. Moskva: Nauka, 1983. – S. 272.

[7] Abu Rayhan Beruni. Tanlangan asarlar. T. V. Toshkent: Fan, 1973. – B. 7; Matvievskaya G.P., Rozenfeld B.A. Matematiki i astronomi musulmanskogo srednevekovya i ix trudi (VIII - XVII vv.). T.2. Moskva: Nauka, 1983. – S. 266.

[8] Muhammad Ibn Muso Xorazmiy. Tanlangan asarlar. Matematika, Astronomiya, Geografiya. – Toshkent: Fan, 1983. – B. 173.

Sindhids' lifestyle, plays main role for hindoo's as the holiday "Mehrjan" for Persians. They present valuable gifts to each other and gathering together in their holy places. After a while they go out for a walk and gathering for meetings, submissing to the world and obeying him"[9]. Particularly, there were listed names of twelve months on page 105 of this work. To the above mentioned S.F.Starr in his work named "Forgotten enlightment: Golden Age from Arabian conquest of Central Asia to Amir Temur's period" pointed out his thoughts, while he mentioned that there's too little information about hinds "in a work"Architectural derivation from ancient nations" comprehending with "India". This event in the work of Biruni called "Chronology", as the reason why India and other countries were not added , depicted his idea by saying that: I don't come across any person who knows exact data about it , so I gave up that I could not specify clearly[10].

The work " Kitab at-tavhim li avoil sinat at-tanjim" ("Tafhim") was written in 1029-year, is an encyclopedical work that includes 8 chapters: Law, arithmetic, astronomy, geography, astrology, asturlab, ahkami nujum; it is written as the answers to 530 questions. We can come across with valuable information about India and its people. We can find the information that is related to the topic in the chapter "Chronology". In a table below, names of the Indian months and weeks are given. This table helps us to know exact celebration date of holidays, according to exact months and days.

The names of week days in Indians[11]

Aditya vara	Somavara	Mangala vara	Budha vara	Brihaspati vara	Shukravara	Shanayshchar a vara
Day of Sun	Day of Moon	Day of Mirrix (Mars)	Day of Utorid (Merkuriy)	Day of Mushtariy (Jupiter)	Day of Zuhra (Venera)	Day of Zuhal (Saturn)
Sunday	Monday	Tuesday	Wednesday	Thursday	Friday	Saturday

The work of Abu Rayhan Biruni written in 1030-year, among of other his scientific heritage which is handed down over the years, is consedred as a rare work "Tahqiq mo li-l Hind min ma'qula maqbula fi-l-aql av marzula" or "The book of Indian accurating of trustworthy and unreliable education" is called "India" in scientific literature. This work of Biruni is highly-

[9] Abu Rayhon Berun. Tanlangan asarlar. T. I. Toshkent: Fan, 1968. – B. 303.

[10] S. F. Starr. Unutilgan ma'rifat: Markaziy Osiyoning arab istilosidan to Amir Temur davrigacha bo'lgan oltin asri.-Toshkent: O'zbekiston, 2018. – B. 385.

[11] Abu Rayhon Beruni. Tanlangan asarlar. T. VI. Toshkent-Urganch-Khiva: Ishonch, 2006. – B. 117.

assessed by Eastern and Western scholars.

Eventhough Biruni had not visited India, he was interested in India, since all of the scholars who lived in Middle centuries was interested in this place's science, culture and history. Before completing the work "India", Biruni learnt about the Indian people that lived in Central Asia, in his works "Osor al-bokiya", "Tafhim" he gave some information about this nation and provided with a full data in "India" work. Indeed, Biruni's "India" is different from other contemporary works and other ones which were written in next years, with factual information and deep scientific analysis. The written sources which were collected by Biruni, is the result of oral survey on Indian religion, philosophy, astronomy, geography, literature, grammar data and poetry. Biruni got acquainted with poem "Mahabharata" and other literatures. He learnt Indian culture, lifestyle, traditions, rules and orders of ceremonies in the process of meeting. This collection created foundation of new historically-scientific and memorial book "India"[12]. Biruni figured out that Indian science developed as well as old Greek subjects.The main task of "India" is to determine the best advances of Indian ideology in different spheres and to observe their sources. This great works demanded that Biruni had to prepare firmly and learn new language in a limited and short time. Biruni admitted that he liked Sanskrit and Indian language classes and emphasized:" I am alone in my period". However it was tough to learn new languages in his 50's. Eventually, he learnt languages adequately to add a lot of transcripted Sanskrit terms in his work[13].

An old Indian culture attracted Biruni. Knowing about entirely new sphere for Biruni meant to understand his period's social matters. So, hard work was required, such as inherently reading works of Indian philosophers and scholars which were written in Sanskrit language. He learnt sources in detail such as "Mahabharata", "Bhadgavadgita", "Sankhya" of Kapilan, " Yogasutra" work of Patanjali" and others in Sanskrit language. In his only "India" work he mentioned about almost 180 Indian works, particularly there were works dedicated to Astronomy. He translated the work "Almajistiy" by Ptolemiy, "Basis foundation" by Evklid and his work about usturlab into Sanskrit language. By translating from Indian works "Karana tilaka", "Arkand", "Khandakhadyaka" into Arabic language, he introduced scientific acheivments of the Indians to

---

[12] Bulgakov P. G. Jizn i trudi Beruni. Tashkent: Fan, 1972. – B. 206.

[13] S.F. Starr. Unutilgan ma'rifat: Markaziy Osiyoning arb istilosidan to Amir Temur davrigacha bo'lgan oltin asri.-Toshkent: O'zbekiston, 2018. – B. 478.

the Muslims, and vice versa.

Biruni acquired previous works about India written in Arabic. He admitted more profound ones among them. While writing about India he tried to be a good story teller, not a criticizer[14]. Biruni's scientific views was reflected on his concepts about Indian literature. He was not satisfied by giving information about various poetry genres in Indian and Sanskrit languages, but he dedicated 13-chapter of "India" for reflections of Indian grammar and books about poems. After having described "chandani" similar to aruz poetry measure, peculiarities of Indian grammar, he pointed out that their books included shkolas. He said that he had difficulties while translating "Uklidus" and "Almajistiy" into Indian language as well as in the process of writing down about Usturlab skill. But he said that he was interested in spreading knowledge and to make aware of others about it. Thus, he mentioned that he meet troubles in translating scientific works into poetry form, but according to his view it was easy way to learn it by heart. In this way, he created stable typology based on poetry measure, he showed in a schematic way by colleting all data. Biruni mostly pointed out about Indian traditions and religious belief.

There were moethnographic date in his than in other searchers' works. While describing Indian weather, flora and fauna, he had learnt perfectly previous scholars and philosophers' works which were not handed in up to now. Except the works that were written in Sanskrit by Indian writers based on the legendary-epic, religiously–philosophical meaning, he used oral information. According to his information, he had Indian friends who collected factual materials about India and its people, traditions, their old religions and culture. Most of them were highly-qualified people. Although such kind of Indian informants gave fully real information because he compared and checked their data to ensure himself, If he felt doubts about some vital information, he warned readers to be careful[15].

V.V. Bartold emphasized in one of his articles: "There is no answer to the question how XI century scholar was so aware of scientific methods and had broadened horizon?"[16] In reality Biruni could not explore India entirely, he had only been to cities below and got acquainted with the culture of these places during the exploration process. "I have found that Lavhur (Lohur)

---

[14] Abu Rayhon Beruni. Tanlangan asarlar. T. II. Toshkent: Fan, 1965. – B. 183.
S. F. Starr. Unutilgan ma'rifat: Markaziy Osiyoning arab istilosidan to Amir Temur davrigacha bo'lgan oltin asri.-Toshkent: O'zbekiston, 2018. – B. 118.

[15] Biruni va ijtimoiy fanlar. Toshkent: Fan, 1973. – B. 96-97.

[16] Bartold V.V. Raboti po istorii islama i arabskogo xalifata.T.VI. Maskva: Nauka, 1966. – B. 263.

fosters situated in 30^{o} and 10`. The distance from there to Kashmir's center is 56 mile. It includes hills and half of them are fields and as well as this, he gave information about locations of Gazna, Lamgon, Kobul, Purshovar, Kande – amir accomadation, Vayhand, Danpur, Jaylam, Nandna, fosters (the distance between Nandna, fosters and Multon is 200 mile) Sialkot, Mandakkakur, Multon. Biruni said he had not been to any other places except them[17], so we can conclude that he had been to Northern-Western parts of India, to be more precise, in some places of Panjob, from Peshovar to Sialkot, in the South to Multan and been to western borders of Kashmir. According to his notice, he defined data about eastern and southern areas by reading works in Sanskrit and observations.

There is a special style of Biruni in his work, he addressed to not only one but also several directions simultaneously not to make readers get bored. If we talk about different subjects in some places of book, then discuss them that is not related to our topic, we don't intend to prolong the topic, but in order to keep readers get interested. Because looking the same things always bring impatience and anxiety. If a learner think about different subjects, he seems himself in various gardens, without managing to know about particular one, another one starts and a person thinks every new has its own pleasure, and gets interested in looking through them[18].

Biruni gave information about chess in chapter 48. He emphasized that chess (Shatranj) appeared in India initially, changes were added by Greeks. The greatness of Biruni's idea is based on his deep reflection and pureness. Biruni emphasized: "This book ("India") is not a discussion and argument book so I don't give the proof of enemies, and don't reject who are not unfair. It is only narrative book. I am writing all words as real ones, I add Greek words to reflect their correlation with Indians"[19]. Biruni pointed out that comparing Indian and Greek religions is more profound, so he talked about Zevs, Heracles, Afina and other Greek deitis. As a result, while learning process by comparing, he added more than 25 narrations from Greek works, for instance Indians also did not write down in the skins like Old Greeks, as the proof he gave the words of Sokrat: "I don't move the knowledge from alive peoples' heart to died sheep's skin"[20].

If it goes to about Indian holidays, so as to know exact celebration days of holiday and famous days in Biruni's works, we will analyze names of months based on the table in "Osor al-

---

[17] Abu Rayhon Beruni. Tanlangan asarlar. T. II. Toshkent: Fan,1965. – B. 244.
[18] Abu Rayhon Berun. Tanlangan asarlar. T. I. Toshkent: Fan,1968. – B. 96.
[19] Abu Rayhon Beruni. Tanlangan asarlar.T. II. Toshkent: Fan,1965. – B. 28.
[20] Abu Rayhon Beruni. Tanlangan asarlar. T. II. Toshkent: Fan, 1965. – B. 138.

bokiya", "India" "Tafhim" in every book, the names of months are similar because they are from one root.

Expressions of the names of Indian months in Biruni works

Names of months					In "India' work 2- division and calling of moths	
"Monuments from ancient nations" (1968 y.)[21]	"Monuments from ancient nations" (2015 y)[22]	"Tafhim"	"India"	Current names	Light half owner of each month	Dark half owner of each month
J-i-t-r	Jaytra	Jaytra	Chaytra	Chaitra	Tvashatri	Jom'ya
B-i-sh-a-k	Vayshaka	Vayshoka	Vayshakxa	Vaisakka	Indrogni	Agniya
Z-i-sh-t	Jirta	Jayshtxa	Jayshitxa	Jyerhtha	Shukra	Ravdra
A-a-so-f	Otoda	Oshoda	Oshoraxa	Ashadha	Vishvedevoh	Sorta
S-r-a-v-a	Sarvana	Srovana	Shrovana	Sratvana	Vishnu	Pitr'ya
B-x-d-r-b-d	Bhadrabata	Bxodrabata	Bhadrapada	Bhadrapada	Aja	Sonta
A-s-v-j	Ashuja	Ashuja	Ashvayuja	Asvina	Oshana	Maytre
K-a-r-s	Kortika	Kortika	Korttika	Karttika	Agni	Shakra
M-n-k-s	Mankathira	Mirgashir-sha	Morgashir-sha	Margasirsha	Sovt'ya	Nirriti
B-v-sh	Yusa	Pausha	Pavsha	Pansha	Jiva	Vishnu
M-a-к	Moga	Marha	Mogha	Magha	Pitr'ya	Varuna
B-a-к-r	Balkuna	Lxalguna	Phalguna	Phalguna[23]	Bxagra	Pushan

Indian holidays are celebrated in these months

[21] Abu Rayhon Beruni. Tanlangan asarlar. T. I. Toshkent: Fan, 1968. – B. 104.

[22] Abu Rayhan Beruni. Pamyatniki minuvshih pokoleniy / Perevod M. Sale. Dop. isp. podgotovka k pechati, vvodniy tekst A. Ahmedova. T. I. Tashkent: Fan. 2015. – S. 95.

[23] Abu Rayhan Beruni. Pamyatniki minuvshih pokoleniy / Perevod M. Sale. Dop. isp. podgotovka k pechati, vvodniy tekst A. Ahmedova. T.I.-Tashkent: Fan. 2015. – S. 393.

Jaytra for Indians is meant a festive prcession. So they call all the holidays "*Jaytra"*. Most of the holidays are celebrated by women and children.

Holidays in *Chatra (Jaytra)* month;

The second day the month – *agdus* (it is celebrated by Kashmir's people).

The eleventh day of the month – *hindole* (The songs are sung the whole day in the temples).

The fourteenth day of the month - *bohand* (holiday for women).

The twenty-second day – *chaytra - chashati* (holiday was dedicated to Bhavagadgi, having a bath and donating).

Holidays in *Vayshakha (Vayshoka)* month:

The third day of the month – *gauretritya* (For the sake of Gaure, for women)

From the tenth to the sixteenth of the month - lighting fire.

Holidays in *Jayshtha (Jayayshtxa*) month:

The first day of the moth - one moon completes, another new moon appears (when moon is full, holiday day is celebrated for wives)

Holidays in *Oshoda (Oshora)* month:

Ohore - denotions are given all days of the month.

Holidays in *Shravana (Srovana)* month:

During the full moon, refreshments are organized for Brahmans.

Holidys in *Bxadrapada (Bxodrapada)* month:

The third day of the month- women's holiday.

The sixth day of the month – *gayhat* (the poor and beggars are provided with food)

The eighth day of the month - *dxruvagriha* (women celebrate this day to have a baby).

The eleventh of the month – *parvate* (the sacred string is prepared and worn).

The sixteenth day of the month – men and children celebrate this day by wearing holiday clothes (give alms).

Holidays in *Ashvayudja (Ashuja)* month:

The eighth day of the month - in honor of Mahonavame (sugar cane is absorbed, denotion is given, gaatling is sacrified).

The fifteenth day of the month - Holiday *Puhoy* (in honor of Vasudeva(Indians struggle with each other and play with animals).

The sixteenth day of the month - Holiday, denotion is given to Brahmans.

The twenty-third day of the month - *ashoka,* (ohoy) (entertaining, wrestling)

Holidays in *Kortika (Kartiki)* month:

The first day the month - debole, merry-making is done and a lot of lamps are lighted at night, presently it meets to Divali).

Holidays in *Morgashirsha* month:

The third day of the month - guvonabotrejo (Gaure) (Women's Holiday Day).

Holidays in *Pausha (Pavsha*) month:

The eighth (moonlight) day of the month-ashtaka (food is prepared and presents are given to Brahmans).

The eighth (dark) day of the month - *shakortam* (turnip is eaten).

Holidays in *Magha* month:

The third day of the month - *mohgatriga* (a holiday in honor of Gaure).

The twenty third day of the month – *monsartagu* (food is prepared with black mung bean and meat).

Holidays in *Pxalguna (Lxalguna)* month:

The eighth day of the month - *purortaku* (food is prepared with fat for Brahmans).

The fifteenth of the month – *shivaroti* (aromatic parfumes and basils are given as a present to Mahodeva).

The twenty third day of the month - *puvatton* (rice is cooked with butter and sugar).

The Hindus of the city of Multan celebrate the holiday in honor of the Sun, which is called *Somba purayotra,* and they pray for the Sun.

Almost all of the holidays above are considered as religious holidays, there are several holidays in each month, which are devoted for women and children.

Famous days of the Indians

Days are distinguished from each other according to given characteristics. For this reason, days are divided into famous (great) and ordinary days. *Sunday* is considered as a Great day in India, because this day is the day of the Sun, like Friday in Muslims. Furthermore Great days includes *avomasa* and *purnima* days, since in this day the Sun and the Moon are joined, the moon has become full.

Four of these days are well-known: the third day of the Vayshakha – *Kshayretok*, the ninth day of Korttika – *Tretojug*a starts, the fifteenth day of Margho – *Dvopara* starts, the thirteenth

day of Oshvayuja – *Kalijuga* starts.

There is no worthy reason to utter, they are taken to take the meaning. These days are designated to give denotions and celebrate holidays. In these famous days the time of gaining morally good deeds is called as punyakola.

Balabhadra said that in his comments about “Khandakhadyaka” said: "If someone is priestess a like *juga*, which means he has fully acknowledged the power of the Lord, avoids doing thins, keeps such a lifestyle till the end of his days on this Earth, all boons and good deeds collected by him are not ample to be comprehended with the person’s good deeds, donations, ablutions, lubricating body with oil, prayings in *punyakola*. In all above described days aimed to be the time for doing good deeds day. Donations are made and ceremonies are organized to gain boons in these days, otherwise, these can be aimless period only for entertainment. There are also days of happiness in Indian culture – *bihu* and *shibu*, these are two equinoxes in autumn and spring. S*onta* is a sacrifice when oil and grains are thrown to the fire. It can be observed that Biruni accurately inserted exact days of ceremonies in his work. These are: Gemini zodiac starts entering time in 18^0, Virgo in 14^0, Sagittarius in 26^0, Pisces starts in 22^0 of the Sun.

The days of the Sun and lunar eclipses are considered to be awful time for Indians, even *vayshiy* and *shudras* committ suicides considering that it is the best time to die, while *brahmans* and *kshatriys* were not allowed to do that. There not only happy days and time, but also there are unhappy days and periods for Indians. Pointing to get rid of unhappiness and tragedy, they break dishes by dropping it to the floor[24].

In the data of Biruni about India, the outlook of the initial Midlle century, hardworking and careful scholar is reflected. P.G. Bulgakov assessed Biruni’s work by saying that: Eventhough the thousand-year-progress is separated us from Biruni, it does not deman us Greatness, but intensifies the Greatness with incomparable work in Middle century Muslim literature[25].

Biruni’s data about India is the result of deep analysis of Hind sources and his personal observations, moreover he commented reliability of every source by giving his ideas. Biruni's peculiar approach and detailed concepts about Indians social and spiritual life are more valuable

---

[24] Abu Rayhon Beruni.Tanlangan asarlar. T. II. – Tashkent: Fan, 1965. – B. 436.

[25] Abu Rayhon Beruni.Tanlangan asarlar. T. II. – Tashkent: Fan, 1972. – B. 206.

than data about India given by Arabian geographers. Biruni gave real, original, clear information about different spheres of Indians.

Abu Rayhon Beruni described all the holidays of the Hindus, reflecting their medieval traditions, ethnography and social history.

Biruni is one of researchers who left priceless information about Indian peoples' history and culture in the Middle centuries. His works serve as a main source to scientists and researchers who deal with Indian history and ethnography.

REFERENCES

1. Abu Rayhan Beruni. Qadimgi xalqlardan qolgan yodgorliklar. Tanlangan asarlar. T. I. Tashkent: O'zbekiston, 2020.
2. Abu Rayhon Berun. Tanlangan asarlar. T. I. Toshkent: Fan, 1968.
3. Abu Rayhan Beruni. Pamyatniki minuvshih pokoleniy. T. I. Tashkent: Fan. 2015.
4. Abu Rayhan Beruni. Tanlangan asarlar. T. II. Tashkent: Fan, 1965.
5. Abu Rayhan Beruni. Tanlangan asarlar. T. V. Toshkent: Fan, 1973.
6. Abu Rayhon Beruni. Tanlangan asarlar. T. VI. Toshkent-Urganch-Khiva: Ishonch, 2006.
7. Boilot D. J. L' Oeuvre d'al – Beruni, essai bibliographique. Caire, 1955.
8. Bartold V.V. Raboti po istorii islama i arabskogo xalifata.T.VI. Maskva: Nauka, 1966.
9. Beleniskiy A. M. Kratkiy ocherk jizni i trudov Biruni. Moskva, 1963.
10. Bulgakov P. G. Jizn i trudi Beruni. Tashkent: Fan, 1972.
11. Biruni va ijtimoiy fanlar. Biruniy tug'ilgan kunining ming yilligiga. Toshkent: Fan, 1973.
12. Matvievskaya G.P., Rozenfeld B.A. Matematiki i astronomi musulmanskogo srednevekovya i ix trudi (VIII - XVII vv.). T.2. Moskva: 1983.
13. Muhammad Ibn Muso Xorazmiy. Tanlangan asarlar. Matematika, Astronomiya, Geografiya. – Toshkent: Fan, 1983.
14. Starr S. F. Unutilgan ma'rifat: Markaziy Osiyoning arab istilosidan to Amir Temur davrigacha bo'lgan oltin asri.-Toshkent: O'zbekiston, 2018.
15. Ghurrat al-Zijat or Karana tilaka. Institute of sindhology university of sind. Sind, - Pakistan. 1973.

I. Yu. Krachkovskiy. Izbrannie sochineniya. T. IV. Moskva-Leningrad, 1957.

Umida Kuranbayeva

Junior Research Fellow,

Department of the History of Culture and Science,

Abu Rayhan Beruni Institute of Oriental studies,

Academy of Sciences of Uzbekistan.

5

उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ भारत-चीन सहयोग

डॉ. डी.सी. चौबे

अगर एक आम भारतीय को यह बताया जाये कि भारत-चीन दो हजार (2000) साल पुराने दोस्त है और दोनो सभ्यताओं ने एक दूसरे को काफी समृद्ध किया है। पर 1962 ई. के भारत-चीन युद्ध की भयानक त्रासदी इस बात को स्वीकार नही करने देती। आजकल भारतीय अखबारों में और पत्र-पत्रिकाओं में चीन की आक्रामकता की चर्चा होती है। समकालीन लेखन में चीन के बारे में नकारात्मक छवि का ही निरूपण है। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम को चीन के लोगो और बुद्धिजीवियों ने किस प्रकार से प्रोत्साहित किया था, उस भावना की प्रस्तुति से पहले कुछ भारत-चीन के ऐतिहासिक विडंबनाओं पर दो बात कर लें। ये दोनो बिडम्बनायें भारत में उपनिवेशवाद और समकालीन चीन मे साम्राज्यवाद के अतिरेक से उत्पन्न हुई हैं। ईसा की प्रथम शती (ई. 57) मे पूर्वी हान वंश के सम्राट मिंग टी ने सपने में देखा कि एक सफेद हाथी उसके पश्चिमी सीमा प्रांत (बैक्ट्रिया-बदख्शाँ) से प्रवेश कर रहा है। दूसरे दिन शगुन विचार वालों ने बताया कि बुद्ध की पवित्र देशना आपके राज्य में शाही संरक्षण प्राप्त करना चाहती है। मध्य एशिया में प्रचार करने गए दो भारतीय श्रीमंतों को चीन में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए बुलाया गया। धर्मरक्षा और काश्यप मतंग सफेद अरबी घोडे पर सवार होकर चीन पहुंचे।[1] राजा बौद्ध हो गया और तेजी से धर्म राज्य में फैलने लगा। उन भारतीय बौद्ध विद्वानों की याद में चीन के तुनहुआंग में 'व्हाइट हार्स मोनैस्ट्री' का निर्माण हुआ और आज भी अजंता की तर्ज पर तुनहुआंग के पास लोयांगा की गुफा में बुद्ध के अभिराम चित्र विराज रहे हैं[2] जो याद दिलाते हैं भारत-चीन की शाश्वत मैत्री जो धुंधली जरूर हो गई पर हम उसे मिटा नही सकते, कारण कि ईश्वर भी आपके अतीत और भाग्य को नहीं बदल सकता। पर कहां प्राचीन काल मे हम बुद्ध की पवित्र देशना लेकर चीन गए थे, और कहाँ औपनिवेशक काल में अफीम की पेटियाँ लेकर केंटन और शंघाई बन्दरगाहों पर उतरे थे।[3]

चीन भारत के अफीम को रोकने लगा तो अंग्रेज उससे युद्ध करने लगे। 1857 ई. की क्रांति जब भारत में अंगडाई ले रही थी उसी समय चीन में भारतीय फौज चीनियों से लड़ रही थी। हजारों वर्षो का मित्र और भाई चीन औपनिवेशिक काल में धीरे-धीरे शत्रु बनने लगा। अंग्रेजों ने अफीम युद्ध की सफलता से उत्साहित होकर चीन पर अपना साम्राज्यवाद लाद दिया और हांगकांग, कैंटन, शंघाई और तिनसिन शहरों में मूंछड़ राजस्थानियों और पगड़ीधारी सिक्खों को पुलिस में भर्ती कर उन्हें डराना धमकाना शुरू किया।[4]

चीन का बुद्धिजीवी तो हकीकत को जानता था कि भारतीय अंग्रेजों की हुक्म की पालना कर रहे हैं, पर चीन की आम जनता धीरे-धीरे भारत की विरोधी होने लगी। चीन में बौद्ध धर्म का काफी प्रभाव और सम्मान था पर चीन के कुछ लोग यह कहने लगे कि जो धर्म भारत की रक्षा नही कर सका वह चीन की रक्षा क्या करेगा।

पर जैसा कि हम जानते है, भारतीय अफीम और अंग्रेजों के गुलाम भारतीयों ने चीन के मन में भारत के प्रति नफरत पैदा की, पर एशियाई सभ्यताओं के अन्तर्सम्बन्ध में अध्येता प्राच्य विद इस हकीकत को भली भांति जानते थे कि भारत-चीन शाश्वत मित्र हैं।

1924 ई. में गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर चीन की यात्रा पर गए थे। तान-युन-शान के नेतृत्व में विश्वभारती शान्ति निकेतन में चीन भवन नामक भारत चीन अध्ययन पीठ स्थापित होने की तैयारी चल ही रही थी।[5]

रवीन्द्र नाथ टैगोर ने चीन के कई प्रमुख शहरों में व्याख्यान दिये थे। बीजिंग में उनके स्वागत भाषण में प्रोफेसर लियांग-चि-चाओं ने एक लम्बा भाषण दिया और चीनी बुद्धिजीवियों और नौजवानों को बताया कि आज भारत किस अंग्रेजों से संघर्ष कर रहा है। चीन भी पश्चिमी साम्राज्यवाद के खिलाफ और सवयं की राह बनाने के लिए जूझ रहा है और दोनों सफल होंगे, ऐसा लगता है! प्रोफेसर ने पहली बार चीन के लोगों को बताया कि किस तरह से भारत ने चीनी संगीत, नाटक, स्वांग, भाषा, धर्म, विज्ञान, चिकित्सा, मूर्ति, स्थापत्य एवं चित्रकला को प्रभावित किया था।[6]

हजारों साल पहले आये भारतीयों ने चीन के जीवन-दर्शन और आचार-विचार को बदल दिया था। लियांग-चि-चाओ ने कहा, हमारे (चीन के) पूर्व में अथाह प्रशांत महासागर की अपरिमित जल राशि थी, जो कुछ दे नही सकती थी, उत्तर में भयानक हूणो का निवास था जो हमारे ऊपर केवल आक्रमण करते थे; और लूटते रहते थे। हमारे पश्चिम में रूसी स्टेपी घास का मैदान था जो थोड़े से युद्धक छोडे दे देता; एक ज्ञान की रश्मि ने उत्तर-पश्चिम से हमारे चीन में प्रवेश किया था, जिसने चीनी सभ्यता, संस्कृति और धर्म विश्वास को समग्रता में बदल के रख दिया था। वो ज्ञान पूंज उसी देश से आया था, जहाँ से जिस देश (भारत) से ये श्रीमन्त (रवीन्द्रनाथ) पधारे हैं। उस ज्ञान की रश्मि ने उस समय चीन को आलोकित किया था। जब हम वैचारिक दुविधा की स्थिति में थे; चीन के वंशधरों को सदैव भारत का सम्मान करना चाहिए।[7]

पर जनवरी, 1949 ई. में चीनी गणतंत्र की स्थापना हुई और एक खास विचारधारा का प्राबल्य हुआ और सांस्कृतिक क्रांति के नाम पर हर परम्परागत प्राचीन संस्कृति और प्राचीन ऐतिहासिक सम्बन्धों को मिटाने की कोशिश की गई। पर गांधीवादी स्वतन्त्रता संग्राम को चीन ने भरपूर नैतिक समर्थन दिया था। इस दौरान दोनो देशों के क्रांतिकारियों ने उपनिवेशवाद (भारत) और साम्राज्यवाद (चीन) के खात्मे के लिए मिलकर संघर्ष किया। [8]

कांग-यूवेई, सन यात सेन, च्यांग काई-शेक, सुगचिंग-लिंग एवं भारत से महात्मा गांधी, एम.एन. रॉय, रवीन्द्र नाथ टैगोर, सुभाष चन्द्र बोस, जवाहर लाल नेहरू ने एशिया से ब्रितानी प्रभुत्व के खात्मे के लिए विचार-विमर्श एवं पत्र व्यवहार किया था। चीन की राष्ट्रीय सेना ने जिन क्षेत्रों पर आधिपत्य स्थापित कर लिया था वहां पर गांधी जी ने चीन में मेडिकल मिशन भेजा था जिसमें डॉ. अटल और डॉ. कोटनीश गए थे। [9]

1942 ई. में च्यांग काई शेक भारत आए और अंग्रेजों पर दबाव बनाया कि अगर ब्रिटेन को द्वितीय विश्व युद्ध में हिटलर और तोजो के खिलाफ विजय प्राप्त करनी है तो आपको भारत की स्वतन्त्रता देकर सहज सहयोग प्राप्त करना चाहिए।[10]

अंग्रेजों और अन्य यूरोपिय शक्तियों को उखाड फेकनें के लिए भारत और चीन के नेता और बुद्धिजीवियों ने कंधे से कंधा मिलाकर काम शुरू किया था, और प्राचीन काल से चली आ रही भारत-चीन शाश्वत मैत्री की अमर बेल लहलहा उठी थी। दोनो देशों के नेताओं ने यह महसूस किया था कि उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद ने इन दो महान प्राचीन सभ्यताओं का विनाश किया है। और अब समय आ गया है कि दोनों देशो के लोगों द्वारा इस गुलामी और शोषण के जुएं को उतार कर फेंक दिया जाये।[11] कांग यूबेई ने दार्जिलिंग को अपनी शरण स्थली बनाकर उत्तरी भारत और पूर्वी भारत में स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों से मुलाकात की और अंग्रेजों को खदेडने के लिए प्रेरित किया था। ब्रितानी

साम्राज्य को एक विशाल जेल कहा था, जिसमें एशियाई कैदी बंद कर दिए गए थे।[12] चीन में सुधार आन्दोलन के सूत्रधार लियांग किचाओं ने भारत के उपनिवेशीकरण के कारण विस्तार, शोषण की प्रकृति और प्रकार पर 100 लेख लिखे और कहा कि भारत को इस दासता के जुएं को उतार फेंकना चाहिए और अंग्रेजों को भगा देना चाहिए।[13]

चीन में भेजे जा रहे भारतीय अफीम और अंग्रेजी साम्राज्वाद के खिलाफ 1874 ई. में अमृत बाजार पत्रिका ने संपादकीय लिखकर भर्त्सना की थी क्योंकि हजारों चीनी भाईयों की अफीम सेवन से असामायिक मृत्यु हो रही थी। 20 वर्ष की उम्र में अफीम व्यापार को मौत का व्यापार रवीन्द्र नाथ टैगोर ने कहा था। रोमेश चन्द्र दत्त एवं गोपाल कृष्ण गोखले ने अफीम व्यापार और चीन में ब्रितानी साम्राज्यवाद की कड़ी भर्त्सना की थी।[14]

सनयात सेन ने अपने भाषणों और लेखों में बार-बार कहा कि ब्रितानी सरकार ने भारत के कुटीर उद्योगों यथा सूती वस्त्र उद्योग का विनाश किया। भारत में रैयतवाड़ी, महालवाड़ी और स्थायी बन्दोबस्त से भूमिकर का दोहन किया है। भारतीय अनाज को समुद्र पार ले गए और पिछले दशक (1885-1895) तक एक करोड़ नब्बे लाख भारतीय अकाल की भेंट चढ़ गए। भारतीयो को अब अंग्रेजों को बर्दाश्त नहीं करना चाहिए। उन्होंने वैश्विक ब्रितानी साम्राज्य के विस्तार में भारतीय संसाधनों के उपयोग का भी उल्लेख किया। भारत ब्रिटेन की जीवन रेखा है- आर्थिक साम्राज्यवाद की बुनियाद है। उन्होंने कहा कि ब्रितानी साम्राज्य भारत के बिना ताश के पत्तों की तरह बिखर जायेगा -विघटित हो जायेगा।[15] उन्होंने भारतीय क्रांतिकारियों को संगठित होकर रणनीति बनाकर लड़ने की सलाह दी थी, क्योंकि उन्हें पता था इस साम्राज्यवाद की रक्षा के लिए अंग्रेज अंतिम क्षण तक डटे रहेंगे। कई भारतीय क्रांतिकारियों की मुलाकात उनसे टोक्यों में हुई थी। भारतीय क्रांतिकारी उन्हें अपना प्रेरणा स्त्रोत मानते थे।[16]

झांग ताइयान, रास बिहारी बोस और बोरोहन के बीच अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ। ये तीन क्रांतिकारी टोक्यों में गुप्त बैठकें करते थे और चीन और भारत के शोषण की कहानियों को साझा करते-करते रोने लगते थे।[17] ये लोग स्वराज्य पर भी गहनता से विचार करते थे। झांग ने भारत में हुए स्वदेशी और बायकाट आन्दोलन पर अपनी पत्रिका मिनबाओ में कई लेख लिखा। इतना ही नही भरत में छपने वाली क्रांतिकारी साहित्य और विचार को अपनी पत्रिका में अनुदित करके चीनी और अंग्रेजी दोनों में प्रकाशित किया ताकि चीन के लोग जान सकें कि भारत अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहा है। झांग ने भारत चीन को एक करने के तरीके पर भी लेख लिखे और यह भी बताया कि वह इसलिए कर रहा है क्योंकि दोनो देश प्राचीन मित्र हैं। अपने एक लेख में झांग ताइवान ने लिखा कि ये दोनो देश अनादिकाल से घनिष्ठ मित्र रहे हैं। अब दोनों को एक होकर एशिया महाद्वीप की रक्षा करनी चाहिए।[18] झांग ने आगे लिखा कि इस भारत चीन एकता स्थापन के प्रथम चरण में उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के खात्मे के लिए सांस्कृतिक सम्बन्ध एवं परस्पर सहयोग किया जाये। दूसरे चरण में आजादी और मुक्ति के बाद भारत चीन का एक पवित्र मित्र संघ बने जो एशिया के लोगों की रक्षा की गारंटी दे।[19]

बोरोहन, रास बिहारी बोस और झांग ने 'एसोसिएशन ऑफ एशियन अफिनिटी' (1907) का गठन किया। 1905 ई. में बाल गंगाधर तिलक, विपिन चन्द्र पाल और लाला लाजपत राय ने विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार आन्दोलन चलाया, ठीक वैसा ही आन्दोलन चीन में उसी साल चलाया गया था।[20]

1923 ई. में डॉ. सनयात सेन ने भारत चीन एकता की वकालत की और साम्राज्यवादी शक्तियों के खिलाफ दोनों देशों में चल रहे संघर्ष को तेज करने की बात कही थी। 30 मई, 1925 को साम्राज्यवादी

प्रवृत्ति के विरोधी जन आन्दोलन पर शंघाई में अंग्रेजों ने फायर कर दिया था और सैकड़ों लोग मारे एक थे। ब्रिटिश हुकूमत ने भारत से चीन के लिए सेना भेजना प्रारम्भ किया। शंघाई के गवर्नर ने गांधीजी को टेलीग्राम किया कि आप भारतीय सैनिकों को चीनी लोगों से लड़ने के लिए भेजे जाने का विरोध कीजिए। गांधीजी ने चीनी गवर्नर के पत्र को अपनी यंग इंण्डिया में प्रकाशित कर दिया।[21] भारतीय लोगों ने भारत में अंग्रेजों के खिलाफ प्रदर्शन प्रारम्भ कर दिया। सितम्बर, 1925 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने अधिवेशन में ब्रिटेन द्वारा चीन में साम्राज्यवाद थोपने और अत्याचार के खिलाफ प्रस्ताव पास किया।[22]

1927 में अपने यूरोपिय प्रवास में जवाहर लाल नेहरू ने विश्व मंच पर चीन में अंग्रेजों द्वारा चलाए जा रहे अभियान को उठाया और उसी वर्ष कांग्रेस कार्य समिति ने चीन के पक्ष में नैतिक और भौतिक समर्थन देने का प्रस्ताव पारित किया और चीनी जनता को आश्वस्त किया कि हम भारत के लोग चीन के साथ हैं। 2 मार्च, 1927 को मिन्गुओ रिबाडो (गणतांत्रिक दैनिक) में मोटे अक्षरों में चीन में ब्रितानी सैन्यवाद के लिखाफ वक्तव्य को छापा। अप्रैल 13, 1927 में मकाउ में मिगुओ रिबाडो में गदर पार्टी से सम्बन्धित आशय पत्र छापा कि अंग्रेजी उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ भारत और चीन के क्रांतिकारियों में एकता स्थापित करने का समय आ गया है।[23]

10 फरवरी, 1927 को ब्रुसेल्स में शोषित राष्ट्रो के नेताओं का एक सम्मेलन हुआ। भारत से राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रतिनिधि तथा चीन से कुओमितांग के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। इसमें दोनों देशों के नेताओं ने राष्ट्रीय कांग्रेस और कुओमितांग में निकट सहयोग पर जोर दिया और भारत और चीन के नेताओं ने एक दूसरे के देश में चल रहे संघर्षों का समर्थन और सहयोग के प्रण लिये थे। कुओमितांग ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रतिनिधियों को अपने आगामी सम्मेलन में तथा राष्ट्रीय कांग्रेस ने चीनी प्रतिनिधियों को अपने अधिवेशन में बुलाया। [24]

पर इस क्रम में मैडम सनयात सेन और कुओमितांग अध्यक्ष वांग जिनवेई ने भारत आने की कोशिश की तो अंग्रेजों ने उन्हें रोक दिया पर कई चीनी नेताओं के राष्ट्रीय आन्दोलन के समर्थन में लिखे पत्रों को पढ़ा गया और नेहरू जी ने अपने अधिवेशन में कहा था आप हमें समर्थन और उत्साह देते रहिए वो दिन दूर नही जब आप एक सम्मानित राष्ट्रीय अतिथि के रूप में हमारे देश में आयेंगे।[25]

गदर आन्दोलन के कई नेताओं ने चीन और जापान में शरण ली हुई थी। चीनी क्रांति ने चीन में गदर पार्टी के गठन और विकास के लिए अनुकूल माहौल प्रदान किया गया था। मंशा सिंह को कई चीनी क्रांतिकारी शरण दिए हुए थे। गदर पार्टी के कई नेता शंघाई, बीजिंग और कैंटन में शरण लिए हुए थे। इन्दर सिंह नामक गदर नेता ने चीन में रह रहे सिक्खों और भारतीयों में पैम्पलैट बांटे थे कि आप लोग अंग्रेजों की सेवा छोडकर भारत की सेवा कीजिए। उन्होंने कहा कि भारत के लोगों को चीन के साथ सहयोग करना चाहिए क्योंकि चीन की अंग्रेजों से मुक्ति भारत की स्वतन्त्रता का मार्ग प्रशस्त करेगा। चीन में भारत, कोरिया और वियतनाम के क्रांतिकारियों ने 1925 में शोषित राष्ट्रों का एक संघ बनाया था जिसके कार्यकारिणी सदस्य के रूप में पंजाब प्रान्त के क्रांतिकारी दर्शन डेरा सिंह एवं चरन सिंह चुने गए थे पर आगे चलकर शंघाई में दर्शन डेरा सिंह अपने 12 साथियों के साथ पकड़े गये थे।[26]

चीन और भारत के विदेशी छात्रों, श्रमिक संघों तथा पत्रकारों के बीच अंग्रेजों की मुखालफत की एक श्रृंखला बन गई थी। 1937 से 1945 तक भारत की जनता और नेता चीन के साथ खडे हो गए। जापानी वस्तुओं का बहिष्कार हो गया। जापान से होने वाला व्यापार कम हो गया। महात्मा गांधी, नेहरू और रवीन्द्र नाथ टैगोर ने अपने भाषणों और लेखों में जापान की भर्त्सना और चीन की हौसला अफजाई की थी।[27]

जब सुभाष चन्द्र बोस 1938 में राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष हो गए तो चीन में डॉ. अटल चोलकर कोटनीश, बसु एवं मुखर्जी ने नेतृत्व में उत्तरी चीन में मेडिकल सहायता टीम भेजी गई थी। कोटनीश ने तो इतनी ज्यादा सेवा का काम किया कि थकान से उनकी मृत्यु हो गई। उनकी मौत पर शोक व्यक्त करते हुए माओत्से तुंग ने कहा था कि चीन की राष्ट्रीय सेना ने एक सहायक खो दिया, चीन ने एक दोस्त खो दिया और इस विश्वबन्धुत्व को दुनिया हमेशा याद करेगी।[28]

1939 में नेहरू की चीन यात्रा ने दोनो देशों के नेतृत्व को काफी करीब ला दिया। नेहरू जी ने सात सूत्रीय परस्पर सहयोग, जिसमें एक दूसरे के आर्थिक तंत्र को समझना था और जिसमें सूचनाओं के आदान-प्रदान की व्यवस्था थी, और कुओमितांग और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बीच निकट सहयोग एवं समर्थन की बात कही गई थी। जब द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ गया तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने कहा था कि ब्रिटेन पहले घोषणा करें कि युद्धोपरान्त वह भारत को स्वतन्त्र कर देगा, तभी भारत की सेना और लोग ब्रिटेन का समर्थन करेंगे।[29]

चीनी मुखपत्र शिन्हुआ रिबाओ ने भारत का समर्थन किया और लिखा कि भारत के लोग ब्रिटिश साम्राज्यवाद को पोषित करने वाले युद्ध में भाग नहीं लेंगे। उस पत्र के सम्पादकीय में कहा गया कि हम अपने भारतीय भाईयों को सलाम करते हैं और शुभकामना देते है कि वे पूरी शक्ति से ब्रितानी साम्राज्यवाद के खात्मे के लिए संघर्ष करें। जब 31 अक्टूबर, 1941 को नेहरू जी गिरफ्तार कर लिए गए तब पूरे चीन में शोक की लहर फैल गई।[30]

माओत्से तुंग, चाउ-एन-लाई और चेन शान्यू ने विश्व बिरादरी से अपील किया था कि नेहरू जी को तुरन्त रिहा करवाने में सहयोग करना चाहिए। शिन्हुआ मुखपत्र में अपने सम्पादकीय में लिखा नेहरू को किस गुनाह में गिरफ्तार किया गया? हां इतना जरूर है कि नेहरू जी ने अपने देश की आजादी की मांग की और भारत को युद्ध में भाग लेने का विरोध किया, जो कि भारत का नागरिक होने के नाते उनका नैसर्गिक अधिकार था। वे जेल इसलिए भेज दिए गए कि उन्होंने ब्रितानी साम्राज्यवाद जिन्दाबाद के नारे नही लगाये।[31]

20 जनवरी, 1942 को शिन्हुआ ने कहा कि भारत के लोगों को स्वतन्त्रता देने का समय आ गया है। अगर फासीवादी ताकतों को पराजित करना है तो भारत को स्वतन्त्र कर उसके लोगों की शक्ति को युद्ध में लगाना चाहिए। जब 1942 के वर्ष भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मध्य गतिरोध बना हुआ था और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अपने अंग्रेजों भारत छोड़ो अभियान में लगी हुई थी, उस समय च्यांग काई शेक भारत आए और राष्ट्रीय नेताओं से बातचीत की और अपने प्रस्थान के समय अंग्रेजों से मांग की थी कि भारत को राजनीतिक शक्ति देना चाहिए और उनके चीन पहुंचने पर पुनः शिन्हुआ ने कहा कि भारत को मुक्त कर उसे आजादी दे देनी चाहिए।[32]

इस प्रकार से राष्ट्र संघ में आगा खॉ ने जापान के मंचूरिया आक्रमण पर चीन का पक्ष लिया था। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान चीन और भारत में पुरानी दोस्ती पुर्नजीवित हुई थी पर 1956 ई. के बाद दोनों देशों के मध्य अंग्रेजों द्वारा बनाई गई सीमा रेखा विवाद का विषय हो गई।[33] खैर दो भाई लड़ते है पर यह लड़ाई शाश्वत नही होती क्योंकि हम मित्र बदल लेंगे पर पडौसी नहीं। हिमालय का फर्क नही होता तो भारत चीन एक ही देश होते - रूस की तरह।

संदर्भ सूची -

1. Bagchi, P.C. India and China, A Thousand Year Cultural Discourse, Bombay, Hind Kitabs Ltd., 1950, P.P. 7-8

2. Panikkar, K.M., India and China, Asia publishing House, 1957, P. 26 Chang, Carsun, Buddhist China, Beijing, 1956, P. 25
3. Thampi, Madhavi, Indians in China 1800-1949, Delhi, 2005, P.P. 69-70
4. Ibid, Pp. 163-64
5. Tan-Chung, India-China, Indian Council for Cultural Relations, New Delhi, P.P. 184-85
6. Ken-Mu, Chin, A Short History of Sino-Indian Friendship, Calcutta, P.P. 17-44
7. Tagore, R.N., Talks on China, Rupa & Co., New Delhi, preface.
8. Selected work of Jawahar Lal Nehru, Vol. 10, Delhi Orient London, 1977, P. 101
9. Tan-Chung, op.cit. P. 27
10. Ibid, P. 28
11. Ibid, P. 38
12. Ibid, P. 39 and collected work of Kang Youwei, P. 812
13. Tan Chung; P. 39 and Birendra Prasad, Indian Nationalism and Asia Delhi, 1979, P. 28
14. Ibid
15. Collected works of Sun-Yat-Sen, 1984, Vol. 3, P. 82
16. Ibid Tang-Chung, P. 41
17. Minbao, Beijing, Science Publisher, 1957, Vol. 2, N. 13, P. 97
18. Ibid
19. Ibid, P. 98
20. Acadmic Monthly (Xue Yuekan) 1979, No. 6
21. Collected Works of Mahatma Gandhi, Vol. 5. P. 172
22. Zaidi, A.M. and S. Chand, Encyclopaedia of National Congress, New Delhi, Vol. 9, P. 43
23. Selected Works of Jawahar Lal Nehru, Vol. 2, P. 76
24. Tan-Chung, Op.cit., P. 48
25. Selected Works of Jawahar Lal Nehru, Vol. 2, P. 85
26. Tan Chung, P. 50
27. The Selected Works of Nehru, Vol. 8, P. 719, Nehru's Letter to V.K. Krishna Menon, Allahabad, August 30, 1937
28. Sheng Xiagong et al, An Indian Freedom Fighter in China Beijing, Foreign Language Press, 1983, P. 174
29. Tan Chung, Op. cit, P. 53
30. Xinhua Ribao, No. 3, 1939, New China Daily
31. Ibid, Nov. 5, 1939
32. Nehru's Speech in New Delhi on April 7, 1942

33. Garg, Mahendulal, Cheena Darpana, 1903, Mathura, P.1

डॉ. डी.सी. चौबे,
सह आचार्य, इतिहास
राजकीय महाविद्यालय, उच्चैन (भरतपुर)

6

उज़बेकिस्तान में हिंदी भाषा और भारतीय संस्कृति के अध्ययन के बारे में विचार

डॉ. कमोला रख्मतजानोवा
डॉ. बायोत रख्मातोव

Abstract

This topic is dedicated to the study of Hindi in Uzbekistan. It has been elaborated that scientific works on the Hindi language have been studied by Uzbek scholars. A comparative grammatical study of Hindi and Uzbek languages is also analyzed. The article is based on the opinions of mature linguists. Today in Uzbekistan there are various scientific directions related to the study of the Hindi language. But the newest direction among these is comparative research. Comparing the two languages, a new stage emerges not only in Hindi and Uzbek linguistics, but also in world linguistics. Becouse is easier to learn and teach the language. The present study considers of the grammatical representation of the category of number of two genetically and typological different languages Hindi and Uzbek. There are authentic material for illustration-studied items taken from modern fictions of the Hindi and Uzbek authors. Affinities and differences in the category of number of the two languages are considers in structural, semantics and function. Also The article analyzed the comparative-typological method of the case grammatical category on Noun of Hindi, belonging to the group Indo-Aryan and Uzbek, belonging to the group of Turkic. The subject is based on the theories of a number of English, Russian, Hindi and Uzbek linguists. In particular, the scientific and thereotical views of J.Layons, K.Guru, Z. Dimshits, G.A.Zograf, V.P.Liperovskiy, O.N.Shomatov, A.G'ulomov, G'. Abdurahmonov, M.Irisqulov, Q.Sapayev were studied in detail and analytical conclusions were made. According to the studied literature, there are some common features in the development of the case category in Hindi and Uzbek. In the modern language of Hindi, as noted above, there are indirect and indirect cases, although in the ancient Uzbek

language the intermediate case existed as the seventh case, but this grammatical form did not express the meaning of the indirect case in Hindi. The indirect case form in the ancient Uzbek literary language became auxiliary as a result of linguistic development. However, in Hindi, the situation with mediation is completely different. The presence of an intermediate case in two compared language systems is a sign of isomorphism, allomorphism from the point of view of the nature of expression. It turned out that most of the conjugation forms in Hindi functionally correspond to the Uzbek auxiliary means. However, in both old and modern Uzbek, auxiliary persons can act as forms of agreement. But the meaning was relatively clearer if it was expressed by means of aids.

अत्यंत प्राचीन काल से उज़बेकिस्तान और भारत के बीच मधुर संबंध चले आ रहे हैं। दिन पर दिन दोनों देशों के बीच संस्कृति, विज्ञान और दूसरे क्षेत्रों में सहयोग बढ़ रहा है। दोनों देशों के वैज्ञानिकों की भागीदारी के साथ वैज्ञानिक संगोष्ठी, सेमिनार या सम्मेलन एक परम्परा बन गई है। प्राचीन रेशम मार्ग तथा मुग़ल सम्राज्य के समय से ही भारत और उज़्बेकिस्तान द्विपक्षीय संबंधो का आनंद उठाते आए है। उज़्बेकिस्तान भारत का मित्र रहा है इसलिए इस क्षेत्र के साथ भारत के सम्पर्क और भारत की मध्य एशिया सम्पर्क नीति में इस देश को प्रथमिकता दी जाती है। दोनों देश आपसी सहयोग से राजनीतिक, वाणिज्यिक और सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत कर रहे हैं। भारत का उज़्बेकिस्तान के साथ उच्चस्तरीय राजनीतिक दौरे नियमित अन्तराल पर होते रहने चाहिए। भारत की मध्य एशिया सम्पर्क नीति को कारगर बनाने के लिए आधिकारिक चर्चा और द्विपक्षीय समझौतों के अंतर्गत व्यापार के नए विकल्पों, लोगों से लोगों के संबंधों के विस्तार पर पारस्परिक सहयोग किया जाना चाहिए।

भारत देश की संस्कृति दुनिया में सब से पुरानी मानी जाती है। हिंदी सीखकर हम भारत की प्राचीन संस्कृति और महान सभ्यता को और अच्छी तरह समझ सकते हैं। इतना ही नहीं रोज़गार की दृष्टि से भी हिंदी सीखकर हमें अध्यापक, अनुवादक और दुभाषिया के रूप में विभिन्न संस्थाओं और दूतावासों में अच्छा काम करने का अवसर मिल सकता है।

सन् 1998 में मातृभाषा की संख्या की दृष्टि से विश्व भर में सब से ज़्यादा बोली जाने वाली भाषाओं के जो आंकड़े मिलते हैं उनमें चीनी भाषा के बाद हिंदी का स्थान है, जबकि कुछ विद्वान लोग मानते हैं कि दुनिया भर में हिंदी बोलने और समझने वालों की संख्या चीनी भाषा बोलने और समझनेवालों से ज़्यादा है। यह तो हकीकत है कि हिंदी बोलने-समझने वालों की तादाद दुनिया भर में तेज़ी से बढ़ रही है । सन् 2005 में जहाँ संसार के 160 देशों में हिंदी बोलनेवालों की संख्या 110 करोड़ मानी गई थी, वहीं 2015 के आंकड़ों के अनुसार 206 देशों के 130 करोड़ लोग हिंदी बोल और समझ सकते हैं । आज संसार भर में 135 देशों के सौ से ज़्यादा विश्वविद्यालियों में हिंदी पढ़ाई जाती है जिस से साबित होता है कि हिंदी का महत्व संसार भर में बढ़ रहा है।[7]

उज़बेकिस्तान में भी सन् 1947 से हिंदी का उच्च स्तर पर अध्ययन और अध्यापन किया जा रहा है । शुरूआत में मास्को और लेनिनग्राद से अनेक विद्वान उज़बेकिस्तान में हिंदी सिखाने और पढ़ाने के लिए आये थे । सन् 1950 –1970 के दौरान उज़बेकिस्तान के अपने विद्वान भी भारतविद् (Indologist)के रूप में मंच पर आने लगे । उन विद्वानों ने भारत तथा हिंदी भाषा और उस से संबंधित अनेक बिषयों का

अध्ययन किया था, जैसे साहित्य, समाजशास्त्र, व्याकरण, संरचनात्मक टाइपोलॅजी आदि ।

प्रसन्नता की बात है कि आजकल उज़बेकिस्तान में Tashkent State University of Oriental Studies, Uzbekistan State World Languages University तथा Lyceium under Tashkent State University of Oriental Studies, School № 24 में हिंदी की शिक्षा दी जाती है । इसके अलावा ताशकंद में स्थित लाल बहादुर शास्त्री भारतीय संस्कृति केंद्र में भी हिंदी का अध्यापन चल रहा है । अनेक अध्यापकों ने हिंदी पढ़ाने के साथ-साथ उस से संबंधित पुस्तकों को भी प्रकाशित क्या हैं । उदाहरण के लिए:

1. डॉ. खानज़रीफ़ा बेगिज़ोवा द्वारा सन् 2004 में "हिंदी भाषा की पाठ्य पुस्तक सामग्रियाँ" और सन् 2007 को "हिंदी पाठ्य पुस्तक" शीर्षक से दो पुस्तकें छापी गयी हैं।
2. स्व. रेना अऊलोवा, डॉ. बायोत रख्मातोव और डॉ. मवजुदा सदिकोवा द्वारा सन् 2009 को "हिंदी भाषा" पाठ्य-पुस्तक का प्रथम भाग छापी गयी है ।
3. स्व. प्रोफ़ेसर आज़ाद शामातोव द्वारा सन् 2010 में "हिंदी भाषा का प्रामाणिक व्याकरण" का प्रथम भाग छापी गयी है ।
4. सन् 2011 में आदालत युनुसोवा की ओर से हाईस्कूलों के विद्यार्थियों के लिए "हिंदी भाषा" पाठ्य-पुस्तक का प्रथम भाग छापी गयी है ।
5. सन् 2015 को प्रो. आज़ाद शामातोव और डॉ.बायोत रख्मातोव द्वारा" उज़बेकी – हिंदी शब्दकोश" प्रकाशित हुआ है जिसका विमोचन 6 जुलाई, 2015 को भारत के प्रधान मंत्री माननीय नरेंद्र मोदी जी द्वारा उन की उज़बेकिस्तान यात्रा के दौरान किया गया है।
6. सन् 2018 में डॉ. बायोत रख्मातोव, डॉ. मवजुदा सदिकोवा, डॉ. सिराजूद्दिन नुरमातोव, मामूरा सुलेयमानोवा की ओर से "हिंदी भाषा" पाठ्य-पुस्तक छापी गयी है ।
7. सन् 2014 में डॉ. शिरीन जालीलोवा की ओर से "हिंदी-उज़्बेकी नृवंश वैज्ञानिक शब्दकोश" और 2018 में "प्राचीन भारतीय संस्कृति की पाठ्य-पुस्तक" छापी गयी है ।

इन सालों में हमारे अध्यापकों द्वारा न सिर्फ़ हिंदी भाषा बल्कि हिंदी साहित्य, समाज शास्त्र के क्षेत्र में भी अनेकों पुस्तकें प्रकाशित की गयीं। उदाहरण के लिए डॉ. तामारा खदजाएवा और प्रोफ़ेसर उलफत मुखिबोवा की ओर से भारतीय साहित्य से संबंधित दस से ज़्यादा पुस्तकों का प्रकाशन किया गया है ।

उज़बेकिस्तान की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिंदी के अध्ययन –अध्यापन के अलावा हिंदी भाषा से संबंधित शोधकार्य में नयी दिशाएँ खुलने लगीं । उदाहरण के लिए उज़बेकिस्तान में हिंदी साहित्य का अनुवाद और विभिन्न विषयों पर शोधकार्यों का दौर शुरू हुआ।

सन् 2019 में डॉ. नीलोफर खोदजाएवा ने "प्रेमचंद के रचनाओं के उज्बेकी उनुवाद की शाब्दिक विशेषताएँ" विषय पर अपना पीएच.डी. का कार्य किया है । उन्होंने अपने शोधकार्य में प्रेमचंद की रचनाओं एवं उनके उज्बेकी अनुवाद की शाब्दिक तथा अर्थगत विशेषताओं की तुलना की है ।

सन् 2005 में डॉ. सिराजुद्दिन नुर्मातोव ने "हिन्दी और सिन्हाली भाषाओं में संख्याओं के रूपात्मक विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन" विषय पर अपना पीएच.डी. का काम किया । इस शोधकार्य में हिन्दी और सिन्हाली भाषाओं में संख्याओं का रूपातमक विशेषताओं की दृष्टि से विश्लेषण किया गया है । हिन्दी और सिन्हाली एक ही भाषा वैज्ञानिक परिवार की भाषाएँ हैं, फिर भी उनमें समनताओं के साथ साथ अनेक विषमताएँ भी हैं । इतना ही नहीं डॉ. सिराजुद्दिन नुर्मातोव आजकल "भारतीय आर्य भाषाओं में संख्यावाचक शब्दों की व्युपत्ति एवं विकास" विषय पर डी.एससी.की थीसिस लिख रहे हैं

भाषा सीखने-सिखाने में टाइपोलाजी का बड़ा महत्व है। इस लिए इन सालों में उज़बेकिस्तान में हिन्दी तथा दूसरी भाषाओं के बीच तुलनात्मक

अध्ययन की शुरुआत हुई है ।

सन् 2020 में टाइपोलाजी के क्षेत्र में दो अलग-अलग भाषावैज्ञानिक परिवार की भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन शुरू हुआ है। उज़बेकिस्तान की राष्ट्रीय भाषा उज़बेकी है। हिंदी और उज़बेकी भाषाएँ भाषवैज्ञानिक और संरचनात्मक दृष्टि से अलग-अलग परिवार की हैं। हिंदी भारोपिय भाषा-परिवार की है और उज़बेकी तुर्की भाषा-समूह की है। फिर भी इन भाषाओं के बीच शब्दों में, व्याकरण में कई सामानताएँ नज़र आती हैं। उदाहरण के लिए उज़बेकी में संस्कृत भाषा के अनेक शब्द मिलते हैं जैसे चर्म, कुलाल आदि। इन शब्दों के अर्थ उज़बेकी में भी charm, kulol हैं। "शाली" – शब्द का दोनों भाषाओं में अर्थ 'चावल का पौधा' है। हिंदी में ऐसे बहुत से शब्द हैं जिनको 'देशज' कहते हैं। उदाहरण के लिए "तावा" -दोनों भाषाओं में इसका मतलब है खाना पकाने का एक बर्तन, "चपाटी" का मतलब दोनों भाषाओं में एक तरह की रोटी, इसी तरह "किचरी" शब्द दोनों भाषाओं में हैं।[4]

इसके अलावा इन दोनों भाषाओं की संरचना में अनेक सामानताएँ भी पायी जाती हैं। हिंदी में कहते हैं कि "उसने अपने मित्र के लिए पुस्तक खरीदी।" उज़बेकी में कहेंगे "U do'sti uchun kitob sotib oldi."। इस प्रकार देख सकते हैं कि दोनों भाषाओं में भी पहले कर्ता अंत में क्रिया आती है। विशेषण और कर्म बीच में आते हैं।[1,5]

हिंदी और उज़बेकी भाषाओं का पदविचार (morphology) की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन किया गया है । दो भिन्न भाषा वर्गों की इन भाषाओं के अध्ययन में दोनों भाषाओं में उपस्थित शब्दों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है, हिंदी में विकारी और अविकारी शब्द[2] एवं उज़बेकी में mustaqil और yordamchi शब्द [4]। मालूम होता है कि दोनों भाषाओं में संज्ञा विकारी शब्द समूह में आती है। दोनों भाषाओं में प्रयोग किये जानेवाले शब्दों का बड़ा हिस्सा संज्ञा शब्द समूह का है । दोनों भाषाओं में संज्ञाओं की अपनी व्याकरणिक कोटियाँ हैं। तुलनात्मक अध्ययन से जानकारी मिलती है कि हिंदी में संज्ञाओं की वचन, कारक एवं लिंग के अनुसार तीन कोटियाँ हैं[4] और उज़बेकी भाषा में भी संज्ञा की तीन व्याकरणिक कोटियाँ हैं – वचन, कारक, स्वामिबोधक।[4] स्पष्ट है कि वचन और कारक की उपस्थिती दोनों भाषाओं में है।

जब हिंदी के लिए विशिष्ट व्याकरणिक कोटियों की बात आती है, तो परिभाषा लिंग कोटि से शुरू होती है, उसके बाद संख्या और कारक आते हैं। उज़्बेक में कोई व्याकरणिक लिंग श्रेणी नहीं है, लेकिन उज़्बेक में एक तार्किक श्रेणी इस कोटि में स्त्री लिंग और पुल्लिंग शामिल हैं। हिंदी में लिंग है पर उज़बेकी में अक्सर यह कोटि आत्मसात शब्दों में प्रकट होती है। उदाहरण के लिए muallim - अध्यापक, muallima - अध्यापिका, adib - लेखक, adiba – औरत लेखक, आदि। ऐसे शब्द उज़्बेकी में भाषण के अन्य भागों को प्रभावित नहीं करते हैं। इसे निम्नलिखित उदाहरणों में देखा जा सकता है। अध्यापक पढ़ाई में नहीं आया; अध्यापिका ने छात्रों से एक प्रश्न पूछा। हिंदी में, हालांकि, लिंग कोटि को पूरी तरह से अलग तरीके से व्यक्त किया जाता है, अर्थात, इस श्रेणी को हिंदी में विशेष व्याकरणिक श्रेणियों के रूप में व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए "सड़क" स्त्री लिंग, "पेड़" पुल्लिंग, «कञ्ची सड़क», «लंबा पेड़»। इन सामानताओं की संरचना, अर्थ और कार्यात्मक दृष्टि से अध्ययन किया गया है।[6] अब कमोला रख्मतजानोवा अपने तुलनात्मक शोधकार्य से संबंधित एक मोनोग्राफ लिख रही है ।

स्वामिबोधक का अर्थ हिंदी में भी मौजूद है, लेकिन इसमें उज़्बेकी की तरह अधिकार का अर्थ व्यक्त करने का व्याकरणिक साधन नहीं है। इसमें, शाब्दिक अर्थ, अर्थात् अधिकारवाचक सर्वनाम, इस अर्थ को

व्यक्त करने का काम करते हैं: kitobim – मेरी पुस्तक, kitobing – तोरी पुस्तक, kitobi – इसकी, उसकी पुस्तक, kitobimiz – हमारी पुस्तक, kitobingiz – आपकी पुस्तक, kitoblari – इनकी, उनकी पुस्तक । कभी-कभी उज़्बेकी में भी स्वामिबोधक प्रत्ययों के उपयोग के बिना, अपनेपन का अर्थ बिना किसी संकेत के व्यक्त किया जा सकता है: जैसे हमारी पुस्तक (-imiz), आपकी पुस्तक (-ingiz)।[6]

दोनों भाषाओं में संख्या की व्याकरणिक कोटि पर वैज्ञानिक और सैद्धांतिक विचारों में आम सहमति है। हिंदी में संख्याओं की व्याकरणिक कोटि न केवल संज्ञाओं से संबंधित है, बल्कि तुकबंदी, विशेषण और क्रिया से भी संबंधित है। हालांकि, संज्ञा वाक्यांश में एक लिंग व्याकरणिक कोटि की उपस्थिति के कारण, किसी संख्या की व्याकरणिक कोटि को व्यक्त करते समय, संज्ञा वाक्यांश में केवल शब्द ही रूप में भिन्न होते हैं। विशेषण, क्रिया कोटि के शब्द प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संज्ञा से मेल खाते हैं। इसके अलावा, हिंदी में, संख्याओं की व्याकरणिक कोटि का उपयोग न केवल शब्दों के बहुवचन में किया जाता है, बल्कि सम्मान के अर्थ में भी किया जाता है।[1,5]

कारक कोटि का दोनों भाषा प्रणालियों में एक ऐतिहासिक चरित्र है। गठन और विकास की प्रक्रिया के दौरान, कारक कोटि में परिवर्तन हुए हैं, जो दोनों भाषाओं में वाक्यात्मक रूप से महत्वपूर्ण हैं।

हिंदी और उज़्बेकी में संख्या और कारक व्याकरणिक कोटियों के टाइपोलॉजिकल, शब्दार्थ, कार्यात्मक रूप से तुलनात्मक-टाइपोलॉजिकल अध्ययन से पता चलता है कि चयनित भाषाएं उनकी संरचनात्मक विशेषताओं के अनुसार एक अधिक एलोमोर्फिक घटना का प्रतिनिधित्व करती हैं। ये व्याकरणिक कोटियाँ अपने अर्थ और कार्यात्मक अवस्था में समरूप हैं।

विशेष रूप से हिंदी और उज़्बेक भाषाओं के व्याकरणि टाइपोलॅजी के क्षेत्र में वैज्ञानिक कार्यों का विस्तर करना चाहिये। इस से न केवल भारतीय और उज़बेक भाषाविज्ञान में, बल्कि विश्व भाषाविज्ञान में एक महान वैज्ञानिक योगदान देगा । रहमतजोनोवा कमोला ने अपने मोनोग्राफ में केवल संख्या और कारक व्याकरणिक कोटियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। भविष्य में दो भाषाओं में सभी व्याकरणिक कोटियों का अध्ययन करना महत्वपूर्ण है । दोनों भाषाओं की तुलना करने से छात्रों को भाषा बेहतर ढंग से सीखने में मदद मिलती है ।

आजकल उज़बेकिस्तान में जिस तरह हिंदी के अध्ययन के लिए छात्रों में शौक और उतसाह बढ़ रहा है, उस से आशा है कि भविष्य में भाषाविज्ञान के क्षेत्र में और भी नयी – नयी दिशाएँ खुलेंगी ।

अंत में यह कहा जा सकता है कि अत्यंत प्राचीन काल से उज़बेकिस्तान और भारत के बीच मज़बूत संबंध स्थापित हैं जिसका विकास हिंदी सीखने से और भी बढ़ता जाएगा । भारतीय संस्कृति दुनिया में सब से पुरानी मानी जाती है । हिंदी महान और सीखने में सरल भाषा है जिसके अध्ययन से हम भारत के विशाल साहित्य और संस्कृति का आनंद भी उठा सकेंगे ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भोलानाथ तिवारी, हिन्दी भाषा, इलाहावाद, 1972, पृ. 709.
2. इंद्र चन्द्र शास्त्री, हिन्दी व्याकरण, दिल्ली, भारतीय पुस्तक परिषद, 1976, पृ. 404.
3. पृथ्वीनाथ पाण्डेय, आधुनिक हिन्दी व्याकरण, दिल्ली, भारतीय पुस्तक परिषद, 2015, पृ. 405.
4. खानज़रीफ़ा बेगिज़ोवा, हिंदी पाठ्य पुस्तक, T.: Toshkent davlat sharqshunoslik instituti, 2007, पृ. 98.

5. Abdurahmonov G'. O'zbek tili grammatikasi, T.: O'qituvchi, 1996.
6. Shomatov O.N., Hindiy tili me'yoriy grammatikasi. 1-qism, T.: Toshkent davlat sharqshunoslik instituti, 2010, B. 112. www.http//indianlinguistics.ru

Authors :

1. Rakhmatjanova Kamola Abdumutal qizi, HOD Commercialization of Scientific and Innovative works, Tashkent State University of Oriental Studies,

2. Bayot Rakhmatov, Senior Teacher Hindi, Departament of South and South-East Asian Languages, Tashkent State University of Oriental Studies.

7

फिजी में भारतीय संस्कृति के संरक्षण में रामायण की भूमिका

गौतम कुमार

रामायण शुरू से ही आम भारतवंशियों के जीवन का अभिन्न अंग रहा है। भारतीय मूल के लोग जहां-जहां भी देश से बाहर गए, उनके साथ उनकी संस्कृति रामायण के रूप में निश्चित रूप से ही उस जगह पर पहूंची। मैं भारत से 12000 कि. मी. दूर प्रशांत महासागर में स्थित एक छोटे से द्वीपीय देश, फिजी में विगत 3 वर्षों से निवास कर रहा हूँ। यहाँ की लगभग 30% आबादी भारतीय मूल के लोगों की है, जो ब्रितानी औपनिवेशिक काल में गन्ने की पैदावार करने के लिए यहाँ लाये गए थे और कालांतर में यहीं के हो के रह गए। आज जब इस देश की आबादी 8 लाख से कुछ ज्यादा है। यहाँ लगभग 2000 रामायण मंडलियां हैं, जो रामायण के यहाँ के समाज में रचे बसे होने का जीता जागता प्रमाण है। मैंने यहाँ कई बार लोगो को अपने वार्तालाप के दौरान रामायण की शपथ लेते पाया और यह शपथ वह तभी लेते हैं, जब उन्हें अपने बात के प्रमाण के अंतिम शस्त्र के रूप के व्यवहार करने की जरूरत आन पड़ती है । यह अपने आप में दर्शाता है कि रामायण इनके मन मस्तिष्क में किस तरह समाया हुआ है। हिन्दू संस्कारों में रामायण का प्रभाव इसी बात से लगाया जा सकता है कि आज भी शादी - विवाह के अवसर पर दूल्हे और दुल्हन को सीता और राम की संज्ञा दी जाती है। आज भी "राम-राम" सबसे ज्यादा व्यवहार किया जाने वाला अभिवादन है और विदाई के समय लोग सीता - राम कहना पसंद करते हैं।

कई बार रामायण संकीर्तन में भाग लेने के दौरान मैंने यह पाया है कि, हिन्दू धर्म की यहाँ की परिभाषा ही रामायण और श्री राम होकर जाती है। जहाँ भारत में जगह, जाति, काल खंड और कई अन्य कारणों से हमारे अलग अलग देवी, देवता और ग्रन्थ महत्ता पाते रहे हैं, यहाँ फिजी का एक ही ग्रन्थ है - रामायण। हालांकि, समय के साथ राम के साथ अन्य पूज्य देवी देवता यहाँ की संस्कृति का हिस्सा बने हैं, किन्तु, रामायण आज भी सबसे ऊँचे स्थान पर ही विराजमान है। मैंने यहाँ के समाज में रामायण के प्रभाव के सन्दर्भ में लामी रामायण मंडली के संयोजक श्री अखिलेश जी से बात की, जो तीन बार भारत में भी अपनी रामायण मंडली के द्वारा राम लीला का आयोजन कर चुके हैं और यहाँ के समाज में रामायण की प्रासंगिकता को लेकर काफी सक्रिय और मुखर रहते हैं। उनका कहना है कि यद्यपि नई पीढ़ी में रामायण को लेकर थोड़ा और काम करने की जरुरत है। रामायण यहाँ के समाज को एक सूत्र में बांधने में समुचित योगदान कर रहा है। वैश्वीकरण के इस आपाधापी में लोग स्थान विशेष में सिमट कर नहीं रहते हैं और इस कारण से समाज की संरचना थोड़ी बदली है पर सामाजिक ताने बाने का एक बड़ा हिस्सा यहाँ रामायण के जिम्मे ही है।[1] उनकी पुत्री रिया, जो अभी किशोरावस्था में है, अभी से ही रामलीला में सीता की भूमिका करती हैं और सीता के बारे में उनकी समझ से इस बात में कोई संशय नही रह जाता कि यहाँ नई पीढ़ी भी रामायण के प्रति काफी सजग और चिंतनशील है।[2] अखिलेश जी इस बात पर संतोष प्रकट करते हैं की उनके समाज के छोटे छोटे बच्चे और युवा काफी बढ़ चढ़ कर रामायण मंडलियों के कार्य कलाप में भाग ले रहे हैं। उनका यह भी कहना है की रामायण में उन्हें अपनत्व दिखता है और रामायण उनके भावनात्मक जुड़ाव का एक आधार है। बच्चे रामायण के हर पात्र से कुछ न कुछ सीख सकते हैं और यह उनकी धरोहर को संजो कर रखने के लिए

काफी महत्त्वपूर्ण है। रामायण से जुडी सारी गतिविधियां बच्चों, युवाओं और पूरे समाज को एक साथ बैठने का अवसर प्रदान करती हैं। उनका कहना है कि जब भारतवंशी यहाँ गिरमिट बन कर आये, उनके पास उनका साथ देने के लिए एकमात्र रामायण का सहारा था। काम करने के बाद जब भी उन्हें थोड़ा समय मिला, सभी साथ बैठ रामायण को आधार बनाकर बातें किया करते। जब भी उन्हें अपनों और अपने देश की याद आई, रामायण में उन्हें उनके देश और परिवार की झलक मिल जाती। श्री अखिलेश का मानना है कि गिरमिट काल के गीत संगीत का एक बड़ा हिस्सा रामायण से जुड़ा हुआ होता था। अपने भारत प्रवास के दौरान किये गए प्रस्तुति को याद करते हुए श्री अखिलेश बताते हैं कि जब उनकी मंडली ने मंत्रोच्चार और राम स्तुति का पाठ किया तो दर्शक अभिभूत हुए बिना न रह सके और दर्शकों को इस बात पर विश्वास ही नहीं था पूरी मंडली भारत के बाहर से आयी है। उनके स्थानीय हिंदी भाषा में चौताल गायन सुन कर एक 80 वर्षीय दर्शक अपनी भावनाओं को रोक न सके और कहा उन्होंने दशकों बाद इस तरह के चौताल गायन को देखा।[3] रामायण के कीर्तन की परंपरा ने फिजी गायन को इस तरह से बांधा हुआ है कि हर गीत आपको त्रेतायुग के अवध राज्य में सम्प्रेषित कर देगी और आप उस समय को जीने के लिए बाध्य हो जाएंगे। आज भी जब कोई पारिवारिक या सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है, लोग रामायण संकीर्तन के बिना इसको पूर्ण घोषित नहीं करते हैं।

फिजी हिन्दू सोसाइटी के सचिव, श्री दलजीत महाराज, जो रामायण से जुडी गतिविधियों में बहुत ही तत्परता से भाग लेते हैं, का कहना है कि रामायण के कारण फिजी के समाज में कुछ संस्कार समाहित हो गए हैं, जो यहाँ अक्सर देखे जा सकते हैं। मंगलवार का दिन फिजी में, विशेषकर हिन्दू धर्म के मानने वालों के बीच रामायण के लिए आरक्षित होता हैं। इस दिन लोग रामायण और हनुमान के पूजन के लिए तैयारी करते हैं। घरों में विधिपूर्वक पूजा, आरती, हवन आदि का आयोजन किया जाता है। श्री दलजीत का मानना है कि, यह आयोजन ज्यादा धार्मिक न होकर, लोगों को एक साथ जोड़ने के लिए एक अवसर प्रदान करता है क्योंकि ऐसे आयोजन के दौरान गाने बजाने का कार्यक्रम निश्चित तौर पर होता है, जो लोगों को विशेषकर युवाओं को हारमोनियम, तबला, जैसे पारम्परिक साज बाज सीखने को प्रेरित करता है। ऐसे आयोजनों के क्रम में छोटे छोटे नाटक, जो रामायण आधारित कहानियों से लिए होते हैं, का भी आयोजन किया जाता है जो बच्चों को एक साथ लाने में काफी सहायक होते हैं।[4] बुलिलेका सनातन मंडली, लंबासा (फिजी के दूसरे बड़े द्वीप में स्थित सबसे बड़ा नगर), आज भी राम लीला का आयोजन हर नवरात्रि में करती है और पूरे श्रद्धा के साथ दसों दिन इस पर्व को मनाया जाता है।

कहा जाता है कि जब शुरुआत में गिरमिट के रूप आये भारतीयों को यह स्पष्ट हुआ कि, अंग्रेजों ने उनके साथ छल किया है, तो उन्होंने “महारानी की जय” बोलने के बदले "रामायण महारानी की जय बोलना" प्रारम्भ कर दिया।

रामायण के कारण यहाँ हिंदी भाषा का भी प्रचार हुआ है। इसी कारण से, भारत के बाहर भी आधिकारिक रूप से हिंदी भाषा बोली जाने वाले देशों में फिजी भी एक देश हो पाया है।

स्वामी विवेकानंद सांस्कृतिक केंद्र (भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् से सम्बद्ध) , सुवा के निदेशक श्री संतोष कुमार मिश्रा, इस विषय पर कहते हैं कि रामायण गिरमिटियों के लिए धर्म से ज्यादा जीवन का आधार बन गयी। दिन भर की थका देने वाली मजदूरी और अंग्रेजों से प्रताड़ित होकर जब ये लोग शाम के समय एक साथ बैठते थे तो उनके मनोरंजन का एक मात्र आधार रामायण आधारित भजन और कीर्तन हुआ करता था। लोग रामायण के धागे से एक साथ जुड़ा महसूस करते थे और उनकी

दिन भर की पीड़ा कुछ कम हो जाती थी। श्री मिश्रा इस बात से उत्साहित नजर आते हैं कि, फिजी में युवाओं में भी आज रामायण को लेकर एक जागरूकता देखी जा सकती है और यह एक उल्लेखनीय बात है।[5] यह रामायण की ही व्यापकता है कि इस छोटे से देश के मूल निवासियों की भाषा, इ-तौकी में भी इसका अनुवाद किया गया है। यह अनुवाद विश्व हिंदी सम्मान से सम्मानित श्री नेमानी बैनीवालु ने किया है, जो हिंदी भाषा के उत्थान के लिए सदैव प्रयासरत रहते हैं। फिजी हिंदी, जो मूलतः पूर्वी उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बिहार की भाषाओं का सम्मिश्रण है, रामचरितमानस के अवधी भाषा में होने के कारण प्राकृतिक रूप से सन्निटकता पाती है। फिजी में घर घर में हनुमान जयंती का पालन और राम ध्वज को स्थापित करना रामायण की ही विरासत है।

रामलीला के मंचन के समय सांस्कृतिक और सामाजिक शिक्षा देने का भी प्रयास किया जाता है जो यहाँ के रामलीला मंचन की एक उत्कृष्टता है। मैं यहाँ के लामी मंडली द्वारा रामलीला के मंचन के दौरान विदेशिया का गायन और उसका मंचन देख एक सुखद आश्चर्य से भर गया । जब इस गायन के बारे में श्री अखिलेश जी से बात की तो उन्होंने बताया कि रामायण उनके लोक संस्कार का हिस्सा है और उसी तरह लोक संगीत भी। गिरमिट काल में दोनों ही चीजें भारतीय संस्कृति को यहाँ स्थापित करने में मिल कर काम करती रही और दोनों को अलग कर के देखा नहीं जा सकता है।[6] इसी मंचन के दौरान मैंने सीता की भूमिका कर रही सुश्री रिया को महिला स्वावलम्बन और महिला के प्रति समाज के दृष्टिकोण पर प्रकाश डालते देखा जो रामलीला के भाग के रूप में ही प्रस्तुत किया गया। सुश्री रिया से बात कर ऐसा महसूस होता है कि आज की पीढ़ी भी रामायण के प्रति न केवल सजग है वरन रामकथा की आज के समाज में प्रासंगिकता को लेकर भी सोचते हैं। रिया कहती हैं कि वो सीता के चरित्र से बहुत ही प्रभावित हैं और उन्होंने सीता की भूमिका को निभाने के पहले काफी अन्वेषण किया। इससे रामायण के प्रति उनकी समझ और भी बेहतर हुई।[7]

यहाँ फिजी में रामायण एक ऐसा महाकाव्य है जिसने धार्मिक उदारता और धार्मिक सहिष्णुता के कारण अपनी व्यापकता को बृहत्तर करने में सफलता प्राप्त किया है। भारत के उलट यहाँ फिजी में जाति विभाजन नहीं के बराबर है जिसका काफी कुछ श्रेय रामायण जैसे ग्रंथों को जाता है। रामायण की इस व्यापकता के पीछे यहाँ के रामायण मंडलियाँ, जो लगभग 2000 की संख्या में हैं, ने काफी महती भूमिका निभाई है।

देखा जाय तो फिजी में सनातन धर्म और सत्संग पूरी तरह से रामायण आधारित है। भारत के उलट यहाँ धर्म, वेदों से सीधे न जुड़ा होकर रामायण से होकर जाता है। गिरमिट काल के जो कुछ प्रमुख लोग हिन्दू संस्कृति को आगे लेकर जाने वालों में उल्लेखनीय हैं, उनमे से तोताराम सनाढ्य, साधु बशिष्ठ मुनि और रामचंद्र शर्मा जैसे लोगों को माना जाता है। इन सबों ने भी रामायण को ही आगे रखकर हिन्दू महासभा, सनातन सभा आदि की आधारशिला रखी, क्योंकि इन्हे पता था रामायण ही वह धागा है जो सारे मतभेदों को दूर कर लोगों को साथ ला सकती है। तोताराम सनाढ्य को तो रामचरित मानस की प्रतियां भारत से फिजी मंगवाने का श्रेय दिया जाता है, क्योंकि उन्होंने ही ऐसे ग्रंथों की मांग को समझ स्थानीय पुस्तक विक्रेता से संपर्क साधा और थोक के भाव में धार्मिक पुस्तकें भारत से मंगवाई। तोताराम ही वो व्यक्ति थे जिन्होंने पहली बार नावुआ में रामलीला का आयोजन करवाया था।[8] फिजी में रामायण ने राम मंडलियों को जन्म दिया और राम मंडलियों ने भारतीय त्योहारों, जो भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण वाहक हैं, को प्रसिद्ध किया और सार्थक बनाया। फाग, भजन, रामनवमी, आदि उत्सवों ने भारतीय संस्कृति की डोर से यहाँ के समुदाय को बाँधा। इसने समुदाय को ज्यादा शक्ति प्रदान की। आज फिजी में अनेक ऐसे विद्यालय और महाविद्यालय

शिक्षा के प्रचार और प्रसार में काफी अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं, जिनको ऐसे धार्मिक समुदाय संचालित कर रहे हैं। रामायण से जुड़े कार्यक्रमों के द्वारा गाँव में अनेक तरह के सामुदायिक कार्यक्रम चलाये जाते हैं। फिजी के समाज में, विशेषकर हिन्दू समाज में, शायद ही कोई ऐसा परिवार हो जिसका कोई एक सदस्य रामायण मंडली से जुड़ा न हो। एक महत्ववपूर्ण बात जो काफी लोगों से बात कर पता चलती है, कि रामायण महाकाव्य को कईओं ने पढ़ा भले न हो, पर रामायण से जुडी कहानियां सुनी जरूर है। यह इस बात का द्योतक है कि पुराने लोग रामायण की विरासत को नई पीढ़ी को हस्तांतरित करने में सफलता प्राप्त की और लोगों को जोड़ कर रख पाए। रामायण से जुड़े कार्यक्रम पहले तो अपने समाज में किये जाते रहे, फिर लोगों ने पास के समाज में भी इससे जुड़े गायन और संगीत को लेकर जाना प्रारम्भ किया, जिससे उनका सम्बन्ध और ज्यादा प्रगाढ़ हुआ और बदले में चौताल जैसे कार्यक्रमों के आयोजनों की संख्या भी बढ़ी है।

फिजी में रामायण मण्डलियो का निर्माण यहाँ के समाज के लिए, विशेषतया गिरमिट समाज के लिए, एक वरदान के रूप में साबित हुई। इन्होने रामायण और इससे जुड़े सारे कार्यकलापों को मंदिर से निकालकर घरों तक पहुँचाया और हर घर को श्री राम का आवास बनाने का कार्य किया। यद्यपि फिजी के भारतवंशी आज फिजी से भी बाहर निकल कर अन्य देशों में जा बसे हैं, किन्तु वे अपने संस्कृति को अपने साथ लेकर गए हैं और वहां भी भारतीय संस्कृति का प्रचार प्रसार कर रहे हैं।

नौसोरी निवासी श्रीमती राकेशनी करन कहती हैं, युवाओं में मोबाइल के बढ़ते प्रभाव ने रामायण जैसे महाग्रंथ से लोगों को दूर करने की भूमिका निभायी है, परन्तु, रामायण उनके समाज का आज भी एक अभिन्न अंग है। वो मानती हैं कि यदि गिरमिट के दौरान आये लोगों ने यदि रामायण को साथ नहीं रखा होता, आज हम जो भी हैं, वह तो कतई नहीं होते। हमारा समाज किसी और रूप में यहां बसा होता। मंगलवार को मंदिर में जाने की प्रथा आज भी देखी जा सकती है, और लोगों के साप्ताहिक कार्यक्रम का आज भी यह एक अनिवार्य हिस्सा है । रामायण के कारण यहाँ मंडलियां बनी और रामायण मंडलियों से मंदिरों का निर्माण हुआ। यही मंदिर कालांतर में सामाजिक केंद्र के रूप में विकसित हुए। यहाँ जब मंदिरों में हर मंगलवार राम कथा होती है या फिर राम नवमी जैसे उत्सवों में जब लोग इकठ्ठे होते हैं तो समाज के अनेक मुद्दों पर बात होती है। राम कथा पूरे समाज को एक अवसर प्रदान करता है कि समाज का हर एक वर्ग और हर एक उम्र के लोग एक साथ बैठें। श्रीमती राकेशनी बताती हैं कि जब मंदिरों के द्वारा समाज का प्रतिनिधित्व किया जाता है तो समाज और देश से जुड़े कई अभियानों में भागीदारी बढ़ती है और सरकारों को भी उनके सन्देशों के सम्प्रेषण में तथा अपने कार्यक्रम के क्रियान्वयन में काफी सहायता मिलती है।[9]

प्लुरलिज़्म डॉट ऑर्ग में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार 28 अगस्त, 2006 को फिजी पुलिस फोर्स ने भी अपने अधिकारियों के लिए बा नगर में सोलहवें रामायण सम्मलेन का आयोजन किया था। इसे तत्कालीन पुलिस कमिश्नर ने फिजी पुलिस फ़ोर्स में और पूरे देश की धार्मिक विविधता का एक स्वरुप बताया था और इसे उनकी शक्ति बताया था। उनके अनुसार यह वार्षिक सम्मलेन हिन्दू अधिकारियों को एक साथ आने और मिलने का अवसर प्रदान करता है और इस तरह से पूरे पुलिस फ़ोर्स के नैतिक मनोबल को बढ़ावा मिलता है।[10]

भारत फिजी मैत्री संघ के अध्यक्ष श्री संजय कुमार अम्बष्ट मानते हैं कि रामायण फिजी के लोगों में इस तरह रच बस गयी है कि यहाँ से बाहर ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड, कनाडा आदि देशों में जा कर बसे लोग भी रामायण को और इससे जुड़े संस्कारों को अपने साथ रखते हैं। उनके अनुसार तुलनात्मक रूप से देखें तो फिजी के युवाओं में रामायण का प्रसार भारतीय युवाओं से ज्यादा है क्योंकि गिरमिट काल से

ही इस आस्था को संजो कर नई पीढ़ी को हस्तांतरित करने का काम किया गया है।[11]

मुअनिवतु सनातन धर्म राम मंदिर, सुवा के मुख्य पुजारी आदरणीय पंडित विष्णु तिवारी तो रामायण को ही फिजी में सनातन धर्म के प्रसार का मुख्या आधार मानते हैं। उनके अनुसार, रामायण ने यहाँ के लोगों में न केवल सनातनी विचारधारा को आगे बढ़ाया है, अपितु नैतिक मूल्यों को भी आगे बढ़ाने में काफी योगदान दिया है। उनके अनुसार रामायण ने अलग अलग पीढ़ियों को काफी प्रभावित किया है। फिजी के युवाओं में संगीत का प्रसार रामायण के कारण काफी हुआ है और यहाँ बच्चे हारमोनियम, तबला आदि पारम्परिक वाद्य यन्त्र बिना किसी औपचारिक शिक्षा के सीख जाते हैं। हर मंगलवार मंदिरों में लोग अनिवार्य रूप से राम पूजा के लिए जाते हैं और संगीत नाद का आयोजन होता है, जो सामाजिक समरसता के लिए एक उत्प्रेरक का काम करता है। पंडित जी एक दिलचस्प बात बताते हैं, की चैत्र नवरात्रि में जहाँ भारत में देवी दुर्गा की उपासना अनिवार्य रूप से की जाती हैं, यहाँ फिजी में लोग नौ दिन राम भक्ति में रामायण का पाठ करते हैं, जो अपने आप में रामयण की महत्ता का बखान करता है।[12]

कुछ वर्ष पूर्व 2016 में यहाँ अंतर्राष्ट्रीय रामायण सम्मलेन का आयोजन किया जाना इस बात की वैधानिकता को और बढ़ाता है कि रामायण फिजी की जीवन शैली का अहम् अंग है।[13/14]

भारत में हम भले ही रामलीला की परंपरा और रामायण की गाथा को उत्तर भारत से ज्यादा जुड़ा पाते हैं, पर यहाँ राम मंडली और रामायण से जुड़े कार्यक्रमों में दक्षिण भारत से भी आये हुए लोग समान भाव से उपस्थित मिलते हैं और यहाँ पूरा भारत किसी भी रामलीला में भाग लेता दिख जाता है। न केवल भारत अपितु नेपाल से आये लोग भी इस रंग से रंगे मिलते हैं।

इसमें दो राय नहीं हैं कि रामायण भारतीय संस्कृति को न केवल संरक्षित करने में अपनी भूमिका निभा रही है वरन फिजी जैसे देशों में तो यह भारतीय सभ्यता की प्रमुख ध्वज वाहक बन कर सामने आयी है। कभी कभी तो ऐसा लगता है कि भारत में ही जो सभ्यता शनैः शनैः कमजोर हो रही है, हमें ऐसे देशों से वापस इस सभ्यता को समझने और सीखने की जरुरत है।

उद्धरण/श्रोत :

1. श्री अखिलेश, संयोजक, लामी रामायण मंडली से वार्तालाप, 10-04-2021
2. सुश्री रिया, निवासी, लामी, से वार्तालाप, 10-04-2021
3. श्री अखिलेश, संयोजक, लामी रामायण मंडली से वार्तालाप, 10-04-2021
4. श्री दलजीत महाराज, सचिव, फिजी हिन्दू सोसाइटी, से वार्तालाप, 27-07-2021
5. श्री संतोष कुमार मिश्रा, निदेशक, स्वामी विवेकानंद सांस्कृतिक केंद्र, (सुवा में भारतीय उच्चायोग) से वार्तालाप, 15-02-2021
6. श्री अखिलेश, संयोजक, लामी रामायण मंडली से वार्तालाप, 10-04-2021
7. सुश्री रिया, निवासी, लामी, से वार्तालाप, 10-04-2021
8. विकिपीडिया (तोताराम सनध्या के बारे में जानकारी)
9. श्रीमती राकेशनी लता करन, निवासी, नौसोरी से वार्तालाप, 10-11-2020
10. https://pluralism.org/news/fijian-police-force-reflects-religious-diversity-nation

11. श्री संजय कुमार अम्बष्ट, अध्यक्ष, भारत फिजी मैत्री संघ से वार्तालाप , 08-08-2020
12. मुख्य पुजारी, राम मंदिर, सुवा, आदरणीय पंडित विष्णु दत्त तिवारी से वार्तालाप, 07-06-2020
13. **फिजी टाइम्स, 16-10-2016**
14. **स्काउट्स ऑफ़ एसडीजी का वेब पेज (लिंक** : https://sdgs.scout.org/project/hci-ramayan-sammelan)

गौतम कुमार
भारत सरकार के सार्वजनिक उपक्रम में कार्यरत
भारतीय जीवन बीमा निगम, फिजी शाखा

8

अभिनव परम्परा का अभिराम काव्योपक्रम 'नतिततति' : एक विश्लेषण

डॉ. वत्सला

महामहिम प्रदत्त राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित, माघ, वाचस्पति प्रभृति अनेक पुरस्कारों से विभूषित, अनेक उपाधियों से सुशोभित, पभिनी, पत्रदूतम् तथा रसकपूरम् जैसे ग्रन्थों के प्रणेता अपरा काशी (जयपुर) के निवासी पं. मोहनलाल शर्मा पाण्डेय (23 सितम्बर, 1934-29 अक्टूबर, 2015), मम्मटोक्त शक्ति, निपुणता, अभ्यास, काव्योद्भवत्रयोगुणोपेत, राजशेखर प्रोक्त शक्ति तथा शक्ति से उत्पन्न प्रतिभा प्रकर्ष से अनुप्राणित, कारयित्री व भावयित्री प्रतिभा द्वय में से कारयित्री प्रतिभा से युक्त, सारस्वत कवि - ये कविगत वैशिष्ट्य उनके काव्य 'नतिततति' में उनके अभिनव प्रौढ़ पाण्डित्य प्रकर्ष का प्रमाण है।

'नतिततति' काव्य मुक्तक काव्य भी है, स्तोत्र काव्य भी है तथा

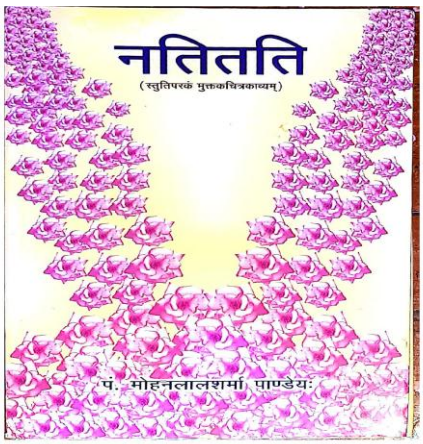

चित्रकाव्य भी है। इस ग्रन्थ में देवी-देवताओं को समर्पित स्तोत्र मुक्तक है, जो एकाक्षर चित्रकाव्य की पद्यबन्ध जटिलता से संश्लिष्ट है। इस काव्य में मुक्तक, स्तोत्र तथा चित्रकाव्य का अदभुत मणि-कांचन संयोग है। इसके मुक्तकों में कालिन्दी, स्तोत्रों में भागीरथी तथा चित्रों में सरस्वती त्रिस्रोता के सौन्दर्य का संगम विद्यमान है।

स्तोत्र साहित्य में एक सुन्दर कड़ी जोड़ने वाले इस नतिपरक मुक्तक चित्रकाव्य संग्रह की यह विशेषता है कि इसका प्रत्येक पद्य नागरी वर्णमाला के एक वर्ण को नायक बनाकर लिखा गया है और उस पद का प्रत्येक पद उस वर्ण से ही प्रारम्भ होता है। पद्यों की रचना में वर्णमाला के किसी भी अक्षर का परित्याग नहीं किया है। यह भी एक अत्यन्त दुष्कर कार्य है क्योंकि ट, ठ, ड, ढ, थ प्रभृति ऐसे वर्ण है जिससे सम्बन्धित सार्थक शब्दों की संस्कृत भाषा में अत्यन्त न्यूनता है। परन्तु कवि ने सभी वर्णों पर पद्य निर्मित किए हैं। इस ग्रन्थ में अलग-अलग वर्ण से शुरू होने वाले 33 स्तुति पद्य वर्णाक्रमानुसार सृजित कर संकलित किए गए हैं। क्ष, त्र, ज्ञ वर्णों को संस्कृत के हिसाब से कवर्ग, तवर्ग आदि में न लगाकर सुखावबोधार्थ हिन्दी वर्णक्रमानुसार अन्त में लगाया गया है।

'नति' शब्द का अर्थ प्रणमन है। श्री आप्टे ने अपने शब्दकोश में नति (स्त्री) नम्+क्तिन् - झुकाव, झुकना, प्रणमन, वक्रता, कुटिलता, अभिवादन करने के लिए शरीर को झुकाना, प्रणति, शालीनता तथा ज्योतिष में भोगांश में स्थानभ्रंश। 'तति' (सर्व. वि. तन्+क्तिन्) श्रेणी, पंक्ति, रेखा, गण, बल, समूह। 'नतिततति' का शाब्दिक अर्थ हुआ प्रणमन-शृंखला। कवि ने स्तुतिपरक मुक्तक चित्रकाव्य में वैदिक देवताओं से लेकर दशावतार तक ही नहीं अपितु मानवीय संचेतनाओं तक का प्रणमन किया है। कवि ने समस्त शक्तिपुंज जिसमें सामान्य से हटकर असामान्य अर्थात् विशिष्ट

गुण की सत्ता हो, वह चाहे देवता हो या देवी अथवा आर्ष सभी को अपनी प्रार्थना के माध्यम से गुण स्तवन करते हुए श्रद्धा समर्पित की है। एक ही देवता के विविध रूपों तथा सामर्थ्य को चित्रित करने के लिए एकाधिक श्लोक भी रचित किए गए हैं। प्रत्येक पद्य अपने आप में पूर्ण है। विभिन्न देवताओं की स्तुति के साथ इन सभी में विपुलार्थ समाविष्ट है।

कवि ने श्री कृष्ण, वामन, वराह, बृहस्पति, परमब्रह्म, श्रीकृष्ण, विष्णु, जमदग्नि, भारद्वाज ऋषि, रूक्मिणी, रूद्र, महाशिव, अग्निदेव, दुर्गा, ब्रह्मा, नृसिंह, शेषनाग, वाग्देवता, महेश्वर, श्रीराम, लक्ष्मी, ब्राह्मी, गणपति, लक्ष्मीपति विष्णु, कार्तिकेय, सूर्य, हनुमान, विष्णु, गंगा, षोडशमातृका आदि देवी-देवताओं की महत्ता व प्रभुता को प्रतिपादित करते हुए उनको नमन किया है। कवि ने नये देवता, जो इस जगत् में पूज्य तो है किन्तु इस नाम से प्रथित नहीं है, उन देवताओं के सन्दर्भ में भी भावाभिव्यक्ति की है जैसे टंकेश्वरी, दुण्ढिराज आदि। कवि विष्णु भक्त है, इसी कारण विष्णु के विविध अवतारों, निमित्त एवं क्रिया-कलापों का गुणगान करते हुए अपनी भक्ति को प्रदर्शित किया है।

इन वर्ण क्रमानुसार सृजित स्तुतिपरक मुक्तक चित्रकाव्य में शब्दार्थ उभयनिष्ठ अद्वितीय सौन्दर्य विद्यमान है, जो चमत्कार से युक्त है। ऐसे काव्यों की रचना वे ही विद्वान कर सकते हैं जिनका शब्दशास्त्र, कोष एवं संस्कृत वाङ्मय पर असाधारण अधिकार हो। ऐसे एकाक्षरी पद्यों के भाव एवं उनमें निहित कथाओं एवं शब्दजन्य चमत्कार का अनुभव - 'आपातालनिमग्नपीवरतनुर्जानाति मन्थाचलः' उक्ति के अनुसार शब्दशास्त्र में ही जिन्होंने अपना जीवन जिया है ऐसे विद्वान ही कर सकते हैं। कवि द्वारा वर्णमाला क्रमानुसार संयोजित छन्दों की अप्रतिम, अद्भुत चमत्कृति तथा शब्दार्थ एवं भावों के गुम्फन एवं दुरूह पदों के ललित विन्यास का सौन्दर्य ग्रंथ में किया गया है।

ग्रन्थ का आद्य मंगलाचरण श्लोक वर्णमाला के आद्याक्षर 'क' वर्ण से सृजित है। इस श्लोक में कवि ने श्री कृष्ण से आशीर्वात्मक स्तुति कर रक्षा की कामना की है। सम्पूर्ण विश्व के मंगलमय जीवन की अभिलाषा व्यक्त की है। इससे कवि का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है कि 'नतितति' का सर्जन स्वान्तः सुखाय नहीं अपितु विश्वजनीन मानव कल्याण के निमित्त हैं। छन्द के प्रत्येक चरण के भीतर गुम्फित पदों में अन्तर्कथा निगूढ है। कवि कृत उद्धरण संदर्शनीय हैः-

कालिन्दीकूलकेलिः कुरुकुलकदनः कानने काम्यकुंजे
केकाभिः कीर्त्यमानः कलितकरुणया कुंजरं
कान्तकायम्।
कुर्वन् क्रीडन् कदम्बे
कनककटककृत्किङ्किणीक्काणकान्तः
कृष्णः कल्याणकारीकलयतु कुशलं केशवः
कंसकालः।।[1]

कवर्ग के दूसरे वर्ण 'ख' से श्लोक की रचना कर वामन रूप विष्णु से समस्त लोकों की अभिरक्षा की कामना की है। 'ग' व्यंजन से ज्ञाननिधि गुरु के गौरव का गुणगान किया है। 'घ' वर्ण से विष्णु द्वारा वराह रूप धारण कर रसातल से धरित्री को ऊपर उठाने और समस्त जीवों की रक्षा करने का वर्णन किया है। वराहवतार का सम्पूर्ण कथांश इसमें वर्णित है।

वर्णमाला के द्वितीयाक्षर 'च' वर्ण से चक्रधारी श्री कृष्ण के स्वरूप का चित्रण करते हुए कवि ने यह कामना की है कि यह सुदर्शन चक्र अविरल चलता रहे जिससे दुर्मद दुष्टों का दलन होता रहे। इस श्लोक के प्रत्येक पद में अन्तर्कथा निगूढ है। 'छ' व्यंजन से भगवान श्री कृष्ण के छलिया स्वरूप की छवि को चित्रित करते हुए कवि कामना करता है कि प्रभु वंचकों के पापों से पुण्यात्माओं की रक्षा करते रहें। 'ज' वर्ण से ब्रह्मर्षि जमदग्नि के गौरव, तप एवं पराक्रम को व्याख्यायित किया है। उनके मनस्वी स्वरूप को चित्रित किया है। जमदग्नि की कथा पदों में निःस्यूत है। 'झ' वर्ण से कवि ने गंगा नदी के स्वरूप तथा

महिमा का गुणगान कर आम आदमी तक पहुँचाने का यत्न किया है। ज्ञानियों में गंगा सी पावनता, सहिष्णुता तथा अज्ञानरूपा पापों को प्रक्षालन करने की क्षमता सदा रहे। कवि ने भारतीय संस्कृति के मूल्यों का संरक्षण करने वाले ज्ञानियों के संकल्प रक्षा की कामना की है जिससे आदर्श सुरक्षित रहे तथा पुण्य प्रवाहित होकर विश्व को दिशा बोध मिल सके।

वर्णमाला के तृतीय आद्याक्षर से आरम्भ कर नये देवता जो इस जगत् में पूज्य तो है किन्तु इस नाम से प्रथित नहीं है ऐसे कोष की अधिष्ठात्री टंकेश्वरी लक्ष्मी देवी के प्रति भावाभिव्यक्ति की है। कवि ने प्रार्थना की है कि वह देवी अस्थिर धनिकों को स्थिर करें। कवि का प्रयोग दर्शनीय है:-

टङ्केश्वरी टङ्ककटङ्कटङ्का
टङ्कारिटङ्काटलटीक्यमाना ।
टाङ्कारकृत् टुण्टुकटुण्टुकाशा
टनाटनं टङ्कयताट्टलेशान्।।[2]

'ठ' अक्षर से आरम्भ होने वाले शब्द बहुत अल्प मिलते हैं अतः कवि ने उसी के अनुरूप छन्द का चयन किया है। कवि ने उपलब्ध शब्दों को लेकर जिस भाव भूमिका को प्रस्तुत किया है वह प्रयोग सफल सिद्ध हुआ है। कवि कृत प्रयोग उद्धरणीय है:-

ठालिन्यै ठक्कुरष्ठङ्गः
ठक्कुरैष्ठक्ठकायते ।
ठङ्कारैष्ठालिनी ठण्ठैः
ठक्कुरान् ठगयत्यसौ।।[3]

इस श्लोक में रूक्मिणी के अपहरण के समय का चित्रण है। रूक्मिणी शिशुपाल आदि वीरों को युद्ध से विमुख कर देती है। रूक्मिणी विवाह की अन्तर्कथा पदों में निगूढ है। इसी प्रकार 'ढ' व्यंजन पर भी शब्द अधिक नहीं मिलते हैं लेकिन कवि ने अपनी अन्वेषीप्रवृत्ति से शब्दकोशों से 'ढ' शब्द का अन्वेषण कर मनोरम स्तुति गणेश जी की है। कवि का पद्यबन्ध उद्धृत है:-

ढौकिता ढौकते ढुण्ढि
ढक्काढोलकढौकनैः ।
ढक्काभिर्ढौकितो ढौकं
ढौकको ढालिढुण्ढिना।।[4]

उत्तर-प्रदेश के वाराणसी नगर में विनायक का देवस्थान 'ढुण्ढि' के नाम से विख्यात है। विभिन्न वाद्य यन्त्रों की मधुर ध्वनि के साथ श्रद्धालु 'ढुण्ढिराज' को प्रणाम करते है। गणपति के महत्व को कवि ने गन्धायित किया है। 'ड' वर्ण से अष्टभैरव की स्तुति की है तथा प्रार्थना की है कि वह अपनी महाध्वनि से शिशुओं की प्रकृति में व्याप्त भय का विनाश करें।

वर्णमाला के चतुर्थ आद्याक्षर 'त' से ताराप्रिय महाशिव से सांसारिको के कष्ट निवारण के लिए प्रार्थना की है। कविवर्य ने शिव की स्तुति करते हुए संसार के दुःखों से रक्षा करने के लिए विनती की है। 'थ' वर्ण से पाँच या छः शब्द ही मिलते हैं। कवि ने अनुष्टुप् छन्द में अथर्ववेद के महत्व को बताते हुए अग्नि देवता से दुष्टों के विनाश के लिए स्तुति की है:-

थूर्वन्त्थमथर्वाणो•र्थार्थं थुडितथूर्वणैः।
थूर्वन्तं थुडितं थूरं थूर्वामस्थूर्व थूर्वितः।।[5]

प्रस्तुत श्लोक में कवि का उद्देश्य अथर्ववेद में प्रतिपादित अभिचार प्रयोगों के दुरूपयोग को समाप्त करना है। 'दकार' व्यंजन से शक्ति के रौद्र रूप दुर्गा की आराधना कर दुष्प्रवृत्तियों का सदैव विनाश करने की प्रार्थना की है। 'धकार' वर्ण से जगन्नियामक सृष्टि के मूल स्वरूप, उद्भव के कारण ब्रह्मा के गौरव का वर्णन कर अपनी स्तुति से ब्रह्मा को प्रसन्न करने की कामना की है। 'न' अनुनासिक वर्ण से नृसिंह अवतार स्वरूप परब्रह्म की गरिमा का गुणगान करते हुए कवि ने नृसिंह भगवान को नमन किया है। प्रकृत श्लोक में नृसिंह भगवान द्वारा हिरण्यकशिपु के वध की अन्तर्कथा सम्पृक्त है।

वर्णमाला के पंचमाक्षर 'पकार' से कवि ने हिमालय पुत्री पार्वती का पावन चरित्र प्रस्तुत करते हुए प्रसन्नता के लिए वन्दना की है। इस श्लोक में पार्वती के तपस्या की अन्तर्कथा निबद्ध है। 'फकार' व्यंजन से भी कोश में न्यून शब्द मिलते हैं। कवि ने शेषनाग की फणविस्तृति का फक्किका के साथ उपमित कर वर्णन किया है। इस छन्द से कवि के वैयाकरण एवं

आयुर्वेद का ज्ञान स्पष्ट होता है:-

फलत्रिकस्य फाण्टेन
फलन्ति फणिफक्किकाः।
फणीशस्य फणाटोपः
फूत्कारैः फक्किकायते।।[6]

यहाँ फक्किकायते शब्द के प्रयोग से उपमा है। फणीशः - सर्पराज शेषनाग, शेषावतार पतंजलि। 'ब' वर्ण से कवि ने सारस्वत सिद्धि की साधिका माँ शारदा स्वरूपा सरस्वती के प्रसाद के सतत् प्रवाह की कामना है जिससे वाङ्मय की वृद्धि हो सके। ज्ञान विज्ञान के सतत प्रवाह से विश्व का मंगल हो सकता है। यदि किसी राष्ट्र में ज्ञान का प्रचार-प्रसार नहीं है तो वह राष्ट्र सुसंस्कृत और समृद्ध नहीं हो सकता है, क्योंकि बौद्धिक चेतना के अभाव में विकास की स्थिति नहीं बन सकती। कवि ने विश्वजनीन कल्याण एवं सुसंस्कृति के लिए अभ्यर्थना की है। कवि सृजित उद्धरण द्रष्ट्रव्य है:-

ब्रह्मण्या ब्राह्म्यबोधा बहुतमबलिका ब्रह्मता
ब्राह्मणानां
ब्रह्मिष्ठा ब्राह्मणीनां बहुलबलवती बोधिका
ब्रह्मबुद्धा।
ब्रह्मज्ञा बोधबोध्या बत बकुलवला बाहुला
बाधितानां
ब्राह्मी ब्रह्माण्डबीजा बलतु बुधवरान् बन्धनाद्
ब्रह्मबाला।।[7]

'भ' वर्ण से कवि ने सप्तर्षि मण्डल के प्रमुख तेजस्वी ऋषि भरद्वाज के महनीय तपः साधना तथा गौरव के लिए नमन करते हुए उनकी तेजस्विता, संकल्पशील तथा ज्ञान-गौरव के लिए स्मरण किया है। कवि का छन्द समवलोकनीय है:-

भरण्यौ भावाटं भरथभरणं भातभविकं
भरण्यं भक्तानां भजनभवनं भारतभवम्।
भविष्णुं भ्रान्तिध्नं भसितभरमालं भवमिदं
भरद्वाजं भव्यं भजत भगवन्तं भयभयम्।।[8]

ऐसे महर्षि ही समाज को सही दिशा देने में समर्थ होते हैं। इनके आदर्श वचन के अनुसार ही लोक प्रशासन की छवि सुधरती है। 'मकार' व्यंजन से महेश की महनीय महिमा को मण्डित किया है। मुक्तिदायक महेश्वर हम सभी को सुख प्रदान करें ऐसी अभ्यर्थना है। इस श्लोक में समुद्रमन्थन की कथा निगूढ है।

कवि ने उपर्युक्त श्लोकों में देवी-देवताओं की स्तुति कर उनसे मानव प्राणी, जगत् के कल्याण की प्रार्थना की है किन्तु 'यकार' अन्तस्थ वर्ण से निर्मित छन्द में कवि ने नारी जगत् की यौतुक के कारण जो दुर्दशा है उसका यथार्थ चित्रण किया है:-

याचे यज्ञेन यज्ञं युवयुवतियुतेर्यौतवं यौवतस्य
योषा यज्ञस्य योनिर्यजनयतयतिर्याजिका
यातनायाः।
याथातथ्यस्य
युक्तिर्यमयमितयुतिर्यज्वभिर्याप्ययानैः
याम्यं यज्ञेन योग्या युगलयमनिका याप्यते
यौतुकार्थम्।।[9]

यौतुक के कारण आज युवतियाँ आत्मदाह कर यमलोक को भेजी जा रही है। 'र' अन्तःस्थ वर्ण से विष्णु के अवतार राम की महिमा का गुणगान किया है। इस छन्द में कुछ ऐसे सन्देश हैं जो आधुनिक समाज को संस्कृति के मूल्यों के महत्व को निर्देशित करते हैं:- 'रम्यो राजाधिराजो रणरणितखो राजतां रामचन्द्रः' राम के गुणों का संकीर्तन करते हुए आज के युग में रामराज्य के आदर्श एवं कर्तव्यनिष्ठा के अस्तित्व को प्रतिष्ठापित करने की कामना की है। शासन व्यवस्था व लोक प्रशासन में रामनीति ही सर्वोपरि एवं सुख शान्ति की कुंजी है यह प्रतिपादित किया है। 'राजताम्' का प्रयोग कर कवि यह कामना करना चाहता है कि इस पृथ्वी पर सदैव आदर्श, मर्यादा एवं सांस्कृतिक मूल्यों के साथ कर्तव्य भावना रहे। 'ल' अन्तःस्थ वर्ण से सौभाग्य, समृद्धि, सम्पत्ता की प्रतीक लक्ष्मी की महिमा का वर्णन किया है। लक्ष्मी के सौन्दर्य, गुण-दोषों का चित्रण करते हुए कवि ने प्रतिपादित किया है कि लक्ष्मी ही सामाजिक प्रतिष्ठा है। 'व' अन्तःस्थ वर्ण

से कवि ने विनायक की वन्दना करते हुए समस्त प्राणियों के अमंगल विनाश की कामना की है।

'श' ऊष्म व्यंजन से कवि ने विष्णु के विविध रूपों का चित्रण करते हुए जगत् के लिए कल्याण की कामना की है। कवि ने इस श्लोक में प्रत्येक पद श अथ श्र से आरम्भ किया है। वैसे तो कवि ने सभी देवी-देवताओं की स्तुति की है किन्तु वैष्णव होने के कारण विष्णु के विविध रूपों का चित्रण करते हुए दुष्कर्मों के नाश की याचना की है। आज समाज में भ्रष्टाचार व कदाचार व्याप्त है, कवि जगन्नियन्ता से अनुरोध कर रहा है कि आप ही दुष्प्रवृत्तियो तथा दुष्कर्मों का शमन करने में समर्थ है। कवि का उद्देश्य इस समाज को प्रेरित करना है। कवि कृत उद्धरण द्रष्ट्रव्य है:-

'श्रीशः श्रीलः शरण्यः शमयतु शमलं श्यामलाङ्ग
श्रुतीशः।[10]'

'षकार' ऊष्म वर्ण से कात्यायनी रूप जगदम्बा षष्ठी देवी की, षकार से युक्त षष्ठ वेदाङ्ग, षट्कर्म, षड्स्वर, षड् पदार्थों, षडानन (कार्तिकेय) षोडशमातृकाओं आदि का स्मरण किया है:-

षट्कर्माणः षडङ्गानि षष्ठीं षड्जं षडाननम् ।
षोडशिनं षडाम्नायं ष्वष्कन्तां षोडशाम्बिकाः।।[11]

'सकार' ऊष्म वर्ण से भास्वर भास्कर ग्रहराज सूर्य देवता की स्तुति करते हुए उनकी तेजस्विता का स्मरण किया है। 'ह' ऊष्म व्यंजन से मारुतिनन्दन, बल के अधिष्ठाता तथा संकटमोचन के नाम से विख्यात हनुमान जी के शौर्य तथा साहस की महिमा का गान करते हुए समाज के कल्याण की कामना की है। कवि का छन्द अवलोकनीय है:-

'हंसो हंसस्य हर्ता हरिहतहनुको हन्तुं हलुं हनूमान्।।[12]'

शत्रुओं की दुर्नीति के दमन के लिए शक्तिपुंज 'हनुमान्' से प्रार्थना का गयी है। 'क्षकार' संयुक्ताक्षर से कवि ने सर्वव्यापक, क्षमाशील, क्षमेश, धरणीश्वर भगवान विष्णु से जगत् के कल्याण के लिए मंगलकामना की है। भगवान विष्णु सभी स्थावर और जंगम को क्षमा करते हुए सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने की कृपा करें:-

क्षुधिताः क्षुभिताः क्षीणाः क्षमां क्षिप्त्वा क्षणं क्षितौ
क्षण्वन्ति क्षमिनः क्षुद्रा क्षमेशः क्षमतां क्षरान्।।[13]

'त्र' संयुक्ताक्षर से निर्मित पद्य 'त्रिसन्ध्ये' का उल्लेख कर तीनो समय सन्ध्योपासन करने की प्रेरणा दी है। कवि इस पद्य में भगवान शिव से प्रार्थना करता है कि ब्रह्मविद् वेदमन्त्रोच्चारक ब्राह्मण की रक्षा करें। ब्राह्मण के अस्तित्व से ज्ञान की निधि संरक्षित है। अतः ब्रह्मवेत्ताओं तथा वेदाध्यायियों की रक्षा होनी चाहिए। भगवान शिव ब्रह्म-ज्ञान वेत्ताओं की रक्षा करते हैं न कि जाति विशेष की। कवि वाङ्मय के संरक्षण के लिए संकल्पशील है और यही इस काव्य का सन्देश है। 'त्रिपुरान्तकः' पद के द्वारा त्रिपुरान्तक के विनाश से सम्बद्ध पौराणिक कथा की ओर संकेत किया गया है:-

त्रिसन्ध्ये त्र्यक्षरत्राणं त्रैविक्रमं त्रयीमुखम्।
त्रिदशात्मा त्रिलोकेशस्त्रायतां त्रिपुरान्तकः।।[14]

'ज्ञ' संयुक्ताक्षर से 'ज्ञ' की सत्ता का प्रतिपादन किया है। 'ज्ञ' की सत्ता के बिना सब शून्य है। 'ज्ञ' से ही ज्ञान प्राप्त कर 'ज्ञानी' बना जा सकता है, केवल शास्त्रीय अध्ययन से 'ज्ञ' में पूर्णता नहीं आ सकती है। ज्ञान का अधिष्ठाता गुरु है। गुरु के सन्दर्भ में ही 'ज्ञ' की गरिमा को रूपायित किया है। ज्ञानमय परमात्मा शिष्यों को बोध देने के लिए गुरु को ज्ञान प्रदान करें।

उपर्युक्त काव्यांशों के विश्लेषण के उपरान्त हम देखते हैं कि कवि ने शब्द के आदि में एकाक्षर (एक व्यंजन) का प्रयोग कर यह तो सिद्ध कर दिया कि संस्कृत वाङ्मय मे शब्दों का अपरिमित भण्डार है। इनके प्रयोग की अर्थवत्ता के लिए कौशल एवं कुशाग्रबुद्धि के समन्वय की आवश्यकता है। ऐसी कृति कोई उपलब्ध नहीं होती है जो 'क' से 'ज्ञ' तक व्यंजनों में एक ही व्यंजन के शब्द का आदि में आश्रय लेकर अन्त तक रचित हुई हो। यह तो स्पष्ट है कि इस प्रकार की चमत्कारपूर्ण चित्रकाव्य रचना और कष्टसाध्य पद्यगुम्फन में वे ही कवि समर्थ हो सकते हैं जिनका

भाषा पर पूरा अधिकार हो, जिनकी लेखनी छन्दोबद्ध कौशल और शब्द चयन का सुदीर्घ अभ्यास रखती हो। निश्चय ही पं. मोहनलाल शर्मा जी ने अवश्य ही अनेक शब्दकोशों को सामने रखकर एक-एक शब्द चुना होगा और उसे शृंखलायित कर किसी देवता को अधिष्ठाता या अधिष्ठात्री बनाकर सार्थक स्तवन की प्रस्तुति की होगी। यह सत्य है कि शब्दशास्त्र एवं संस्कृत के परिनिष्ठित ज्ञान के अभाव में उक्त काव्य के चमत्कार का अनुभव नहीं हो सकता है 'स सूर्यस्य नैव दोषो पदन्धो नैनं पश्यन्ति' अतः एकाक्षरी काव्य सर्जन की महत्ता को स्वीकार किया गया है। इस काव्य के प्रत्येक पद के आदि में प्रत्येक वर्ण के अनुप्रास एवं यमकादि शब्दालंकारों की छटा दर्शनीय है।

आचार्यों ने काव्य के विभिन्न भेदों में चित्रकाव्य को अधम काव्य स्वीकार किया है, परन्तु यदि गम्भीरता से विचार करें तो स्पष्ट परिलक्षित होता है कि चमत्कार ही काव्य का महत्वपूर्ण अंग है। रस या ध्वनि को काव्य की आत्मा कहा जाता है, परन्तु चित्रकाव्य से भी अलौकिक आनन्द ही प्राप्त होता है। यही अलौकिक आनन्द काव्य में चमत्कार है, उसकी अनुभूति उसके शब्द तथा अर्थों के चमत्कार से होती है। यमक, अनुप्रासादि शब्दालंकारों से उसी चमत्कार का अनुभव ही नहीं होता अपितु पाठकों को उन शब्दों के उच्चारण के श्रवणमात्र से एक विशेष प्रकार के आनन्द की अनुभूति होती हैं। इस प्रकार के काव्यों की रचना में वे ही विद्वान समर्थ हो सकते है जिनका शब्दशास्त्र एवं कोष तथा संस्कृत वाङ्मय पर असाधारण अधिकार हो। अतएव प्राचीन महाकवियों में भी माघ, भारवि प्रभृति कुछ विद्वान ही एकाक्षरी पद्यों की रचना करने में सफल रहे हैं। यह स्तुतिकाव्य सर्वथा मौलिक तथा नवीन काव्य शैली से अनुप्राणित है। इस सानुप्रासिक शैली पर किसी भी पूर्ववर्ती कवि-शैली का प्रभाव परिलक्षित नहीं होता है। इस शैली को पाण्डेय शैली नाम दिया जाना उचित होगा।

कवि ने प्राकृतिक सौन्दर्य के सफल चित्र भी प्रस्तुत किए है जो सहज भी है एवं प्राकृत भी। गंगा वर्णन में छोटे-छोटे पौधों के झुण्डों में, सुपारी के पौधों के समूह में झनझन से युक्त सलिल गिरने का शब्द 'छप छप' तीव्र पवन के झोकों से छप-छप की ध्वनि से युक्त, झिंगुरों की झणझणात्मक ध्वनि के साथ गुंजन करती हुई, झन की ध्वनि के साथ मकर की सवारी कर प्रवाहित होने वाली, पर्वतों के प्रपात से गिरने वाली इस महाघोर कलियुग में आर्ष मुनि वैदिक तथा बुद्धिजीवियों के आवास के निकट यह प्रवाहित होती है। कवि ने अपनी गहन दृष्टि से गंगातट पर होने वाले प्राकृत स्वरूप को जीया है। इसी प्रकार यमुना नदी, वनौषधि, आश्रम आदि का सहज चित्रण करते हुए अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। 'कुकुरमत्ता' जैसे शब्द का प्रयोग कर कवि ने जिस सामर्थ्य की प्रतीति करायी है, वह कल्पना का मूल स्त्रोत है, जिससे यह कहा जा सकता है कि कवि की प्रतिभा सर्वतोमुखी तथा दृष्टि व्यापक है।

कवि का पौराणिक ज्ञान विशद है। प्रत्येक श्लोक के साथ पौराणिक आख्यान निबद्ध है। कई श्लोकों के प्रत्येक पद में पौराणिक आख्यान निगूढ है। इन पौराणिक आख्यानों पर पृथक् से पुस्तक लिखी जा सकती है। इतने पारिभाषिक शब्द हैं कि उनकी व्याख्या करने के लिए अनेक ग्रन्थों का आश्रय लेना होगा। कवि ने दार्शनिक सूत्र भी समाविष्ट किए हैं यथा - ब्रह्मिष्ठा, ब्रह्माण्डबीजा, भरथभरणम्, शमितशरटक, षडजं, षडाम्नायम्, ष्वस्कन्ताम्, हेठहीनः, हेवाकी, हूहूहूतो, हल्लुं त्र्यक्षत्राणम्, ज्ञस्या, खोट्याः, खरखेदम्, घनघृतघटकः, झल्ला, झरौघे, झे, टंकेश्वरी, टलेशान्, ठालिन्यै, ठालिनी आदि अनेक ऐसे शब्द हैं जिन्हें बिना शब्दकोश के नहीं समझा जा सकता है। इस काव्य से शब्दकोश भी निर्मित हो गया, पांडित्य प्रयोग भी सफल हुआ है, साथ ही कवि ने उद्देश्य की सार्थकता को भी प्रतिपादित किया है। इस काव्य के गहन अनुशीलन से शास्त्रीय शब्द, पौराणिक आख्यान का ज्ञान तो होता ही है आधुनिक परिवेश

तथा सामाजिक व्यवस्थाओं का दिग्दर्शन एवं सांस्कृतिक मूल्यों की पहचान भी होती है।

यह एक चमत्कारपूर्ण, विशिष्ट, प्रौढ़, हृदयावर्जक चिस्तोत्र काव्य का संकलन है। इस काव्य की विशेषता यह है कि पूरा काव्य ही एकाक्षर अर्थात् वर्णमाला के आद्याक्षर अर्थात् एक व्यंजन से आरम्भ किया गया है तथा श्लोक का प्रत्येक पद भी उसी व्यंजन से आरम्भ हुआ है। ऐसी कृति कोई अन्य नहीं है जो क से ज्ञ तक व्यंजनों से एक ही व्यंजन का आश्रय लेकर रचित हुई हों। कवि ने एक पद्य एक ही अक्षर से पूरा गुम्फित करके 'एकाक्षरचित्रम्' प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत मुक्तक चित्रकाव्य दुरूह समास बहुल पांडित्य शैली में निबद्ध है। यह एक नवीन शैली है। ऐसी शैली अन्य काव्यों में देखने को नहीं मिलती है। कवि का व्याकरणशास्त्र का ज्ञान प्रौढ़ पाण्डित्य से युक्त है एवं शब्दों का ज्ञान भण्डार अपरिमित है। कवि की सानुप्रासिक शैली का प्रभाव किसी पूर्ववर्ती शैली में परिलक्षित नहीं होता। विषय के प्रस्तुतिकरण की शैली प्रौढ़ पाण्डित्य के साथ परम्परा से सर्वथा भिन्न है। देवर्षि कलानाथ शास्त्री ने पुस्तक की प्ररोचना में लिखा है - 'यद्यपि कवि की रचना अधिकांशतः प्रसादगुणयुक्त है फिर भी ऐसे चित्रकाव्यों में पद्यबन्ध की जटिलता अपरिहार्य होती है अतः ऐसे पद्यों को बिना टीका, व्याख्या या अनुवाद के नहीं समझा जा सकता यह तथ्य सुविदित है।'

प्रस्तुत काव्य का अंगीरस कविनिष्ठ देवविषयक (रति) भावध्वनि है। भावध्वनि होने के कारण यह उत्तम काव्य की श्रेणी में परिगणित किया जायेगा। प्रस्तुत काव्य में भक्तिरस भी है। कविवर्य ने कृष्ण की भक्ति का चित्रण भी कई श्लोकों में किया है। पूरे काव्य में वृत्यानुप्रास की छटा विद्यमान है, इसके अतिरिक्त यमक, उपमा, रूपक अलंकारों का भी प्रयोग कवि ने किया है।

कवि ने कृति में सम व विषम उभय वृत्तों का प्रयोग किया है। इक्कीस मुक्तको में स्रग्धरा, आठ मुक्तकों में पथ्यावक्त्र तथा दो मुक्तकों में उपजाति छन्द का प्रयोग किया है। काव्यशास्त्रीय परम्परा में अप्राप्य ट, ठ, ड, ढ, थ इन वर्णों से श्लोक को निर्मित कर कवि ने नवीन परम्परा का विमोचन किया है। जो प्राचीन परम्परा के ठीक विपरीत है। कवि कृत इन वर्णों से प्रणीत श्लोक अन्त्याक्षरी इत्यादि में छात्रों के अनुकूल होने के कारण सराहनीय है।

पं. मोहनलाल पाण्डेय जी ने एकाक्षरी स्तुतिपरक मुक्तक चित्रकाव्य 'नतिति' जैसे दुरूह काव्य की रचना कर विद्वानों के सम्मुख एक विशिष्ट शैली का काव्य प्रस्तुत कर शब्दशास्त्र के अनुशीलन हेतु उन्हें प्रेरित किया है।

सन्दर्भ संकेत:-

1. नतिति, पं.मोहनलालशर्मा पाण्डेय, पाण्डेय प्रकाशन, जयपुर, 2007, श्लोक संख्या -01, पृष्ठ 35
2. तत्रैव, श्लोक संख्या 09 , पृष्ठ 47
3. तत्रैव, श्लोक संख्या 10, पृष्ठ 48
4. तत्रैव, श्लोक संख्या 12, पृष्ठ 50
5. तत्रैव, श्लोक संख्या 14, पृष्ठ 53
6. तत्रैव, श्लोक संख्या 19, पृष्ठ 60
7. तत्रैव, श्लोक संख्या 20, पृष्ठ 62
8. तत्रैव, श्लोक संख्या 21, पृष्ठ 63
9. तत्रैव, श्लोक संख्या 23, पृष्ठ 67
10. तत्रैव, श्लोक संख्या 27, पृष्ठ 75
11. तत्रैव, श्लोक संख्या 28, पृष्ठ 77
12. तत्रैव, श्लोक संख्या 30, पृष्ठ 80
13. तत्रैव, श्लोक संख्या 31, पृष्ठ 82
14. तत्रैव, श्लोक संख्या 32, पृष्ठ 83
15. तत्रैव, प्ररोचना, पृष्ठ 02

डॉ. वत्सला

सह- आचार्य, संस्कृत, राजकीय महाविद्यालय

झालावाड़

9

नागार्जुन के कवि-कर्म का एक रूप यह भी

डॉ. बहादुर मिश्र

नागार्जुन हिन्दी के ऐसे कवि हैं, जो न केवल कई भाषाओं के जानकार थे, बल्कि उनमें एक साथ सर्जनात्मक साहित्य का लेखन भी किया करते थे। ऐसी भाषाओं की संख्या पाँच है; यथा-मैथिली, हिन्दी, संस्कृत, बँगला और सिंहली। संस्कृत-माध्यम से पढ़ाई करने वाले कवि नागार्जुन का पहला प्यार संस्कृत था, यद्यपि उनकी मातृभाषा मैथिली थी। एक जगह उन्होंने इस बात का खुलासा भी किया है- "संस्कृत काव्यों की जो रचना-भूमि है, वह जब हमारे सामने आती है तो फिर हिन्दी-बँगला-मैथिली वाला वो सब हम भूल जाते हैं। ××× शब्दों को गढ़ने की ताकत मुझे संस्कृत से प्राप्त हुई है।"[1]

बँगला-भाषा और साहित्य से नागार्जुन का लगाव तब हुआ, जब वे काशी में अध्ययन कर रहे थे, अर्थात् छात्र-जीवन से ही। वहीं उन्होंने बँगला-साहित्य को मूल बँगला में पढ़ना शुरु किया। उनका यात्री नाम बँगला की ही देन है। "1934 ई. में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर की दो पंक्तियों-'पतन अभ्युदय-बंधर पंथा, युग-युग धावति यात्री, तुमि चिर सारथि, तव रथ चक्र, मुखरित पथ दिन-यात्री।" से अभिभूत होकर 'यात्री' शब्द के सर्वांशतः अर्थ को जीवन में उतारने के लिए अपना उपनाम 'यात्री' रखा।"[2]

बँगला के प्रति नागार्जुन का लगाव कलकत्ता-प्रवास में और भी पक्का हुआ। 1933 ई. में वे गवर्नमेंट संस्कृत-कॉलेज से 'काव्यतीर्थ' की पढ़ाई करने गए थे। 'नागार्जुन रचनावली' के संपादक और उनके ज्येष्ठ पुत्र शोभाकांत ने रचनावली के तृतीय खंड की भूमिका 'यह खंड' में लिखा-"नागार्जुन जीवनभर बँगला भाषा की क्लासिक और अत्याधुनिक रचनाओं से निकटता बनाए रहे। निकट से जानने वाले जानते हैं कि उनके झोले में बँगला-पत्र-पत्रिकाओं के साथ सद्यः प्रकाशित बँगला-पुस्तकें भी रहती थीं। 1945 ई. से 1955 ई. तक के बीच बँगला की कई गद्य-कृतियों का हिन्दी में अनुवाद किया था उन्होंने।"[3]

बँगला में मूल लेखन की शुरुआत उन्होंने 1978 की फरवरी से की। सितंबर, 1979 तक उन्होंने तकरीबन पचास कविताएँ रच डालीं। कुछ पत्र-पत्रिकाओं में भी छपीं। उनमें से कुछ देवनागरी-लिप्यन्तर तथा हिन्दी अनुवाद के साथ हिन्दी की लघु पत्रिकाओं में छपीं। सन् 1997 के अंत में 'मैं मिलिट्री का बूढ़ा घोड़ा' नाम से उनकी इकतालिस कविताओं का संकलन छपा, जिसमें देवनागरी लिप्यंतर के साथ-साथ हिन्दी अनुवाद भी था। इनमें 1992 में रचित एक कविता 'बोकामिर एइ यज्ञ' (बेवकूफी का यज्ञ) भी शामिल थी। आगे चलकर 'नागार्जुन रचनावली: 3' में ये सारी कविताएँ तो संकलित हुईं ही, अन्य नौ कविताएँ भी खोजबीन कर शामिल कर ली गईं। इस तरह, उनकी उपलब्ध बँगला-कविताओं की संख्या पचास हो गई। मैथिली के वरिष्ठ साहित्यकार व आलोचक डॉ. यशोदानंद झा ने बँगला-कवि के रूप में नागार्जुन का मूल्यांकन करते हुए लिखा- "हुनक बँगला काव्य-संकलन 'आमि मिलिटारिर बुड़ो घोड़ा' रवीन्द्रोत्तर समकालीन बँगला कविक श्रेष्ठ रचना जकाँ पढ़ल जाइत अछि आ ओकर विवेचना हिन्दी अथवा मैथिलीक रचनाकारक मूल रचना जकाँ होइत अछि।

ओ बँगलाक मूल रचनाकार जकाँ प्रतिष्ठित छथि।''[4] अर्थात् उनका बँगला काव्य-संकलन 'आमि मिलिटारिर बुड़ो घोड़ा (मैं मिलिट्री का बूढ़ा घोड़ा) रवीन्द्रोत्तर समकालीन बँगला कवि की श्रेष्ठ रचना की तरह पढ़ा जाता है और उसकी विवेचना हिन्दी या मैथिली रचनाकार की मूल रचना के समान प्रतीत होती है। वे बँगला के मूल रचनाकार की तरह प्रतिष्ठित हैं।

नागार्जुन की बँगला-कविताओं को प्रवृत्त्यात्मक दृष्टि से छह कोटियों में विभक्त किया जा सकता है- 1. प्रकृतिपरक, 2. प्रेमपरक, 3. राजनीतिपरक, 4. व्यंग्यपरक, 5. आत्मपरक, 6. अन्य।

1. प्रकृतिपरक कविताएँ:

नागार्जुन की प्रकृतिपरक कविताओं में 'भुतुड़े तेतुलेर गाछ' (11 जुलाई, 1978), 'दाडिये आछि' (17 जुलाई, 1978) और 'पलातक शिशिरेर द्विरागमन' (19 फरवरी, 1979) प्रमुख हैं।

'भुतुड़े तेतुलेर गाछ' (भुतहा इमली का गाछ) एक छोटी वर्णनात्मक कविता है। लगभग डेढ़ सौ वर्ष पुराना यह पेड़ एकतरह से अन्य पेड़-पौधों का परदादा-परनाना है। एक दिन वैषाख माह की तूफानी हवा ने इसे धराशायी कर दिया। कवि को मर्मान्तक पीड़ा हुई- ''आहा, जीवनान्ते कि ये/ मर्मन्तुद परिदृष्य हये गैछे'' अर्थात् आहा कैसा मर्मान्तक परिदृष्य है! जीवन का यह अन्त।'' [5]

इमली के इस पेड़ के बारे में लोगों का अन्धविश्वास था कि इस पर भूत-प्रेत रहते हैं। एक तो इमली का पेड़, उस पर पुराना। भुतहा तो होगा ही। इस कविता में कवि ने इसी अन्धविश्वास का खंडन किया है। कवि का विचार है कि पुराने वृक्ष को परिवार के बड़े-बुजुर्ग की तरह ही ससम्मान सुरक्षित रखना चाहिए। इसके बारे में कोई प्रवाद तो फैलाना ही नहीं चाहिए। गाँव में आज भी बड़ी-बूढ़ी स्त्रियों को 'डाइन' कहकर प्रताड़ित किया जाता है। कुछ ऐसा ही प्रवाद इमली के पेड़ के बारे में फैला हुआ है। कवि लोगों के इस रवैये से मर्माहत है।

'दारिए आछि, 'अर्थात् 'खड़ा हूँ' शीर्षक कविता में कवि का निर्व्याज प्रेम प्रकट हुआ है। कवि भागीरथी के इस पार पटना के राजनगर-स्थित मंदिर के प्रांगण में खड़ा है। बीच में कलकल निनादिनी गंगा और उस पार संबलपुर का विस्तृत दियारा। सिर के ऊपर मेघाच्छादित आकाश। सुबह की वेला, चारों ओर प्रकृति का घेरा-''भागिरथीर एई महाप्रवाह/ श्रावणेर मेघाच्छन्न एई आकाश/ ओ पार सुविस्तृत दियारा/ संबलपुर।'' [6]

इस कविता में दृश्य, द्रष्टा और दृष्टि-तीनों की एकान्विति एक नई अर्थ-विच्छित्ति उत्पन्न कर रही है। महाप्रवाहमयी भागीरथी, सावन महीने का मेघाच्छन्न आकाश, संबलपुर का सुविस्तृत दियारा तथा राजनगर स्थित मंदिर का आँगन-ये चारों मिलकर 'दृश्य' (सीन) की रचना कर रहे हैं। आँगन में माथे पर तौलिया रखकर (भींगने के भय से) चारों ओर निहारता प्रकृति-प्रेमी कवि द्रष्टा की भूमिका में है। 'दिक्' (स्पेस) और 'काल' (टाइम) को एकान्वित कर देखने की चेष्टा 'दृष्टि' (विज़न) है। सावन की प्रवहमान भागीरथी काल और दिक् का समन्वय, अर्थात् दोनों के साहचर्य का सुन्दर निदर्शन है। पटने का राजनगर, राजनगर में बना मंदिर, मंदिर के सामने निर्मित आँगन, संबलपुर आदि दिक् के स्थूल उदाहरण हैं। श्रावण माह तथा सुबह की वेला 'काल' (टाइम) के दृष्टान्त हैं। कविता छोटी और साधारण-सी लगती है, पर है नहीं।

'पलातक शिशिरिरे द्विरागमन' (भगोड़े शिशिर का पुनरागमन) नागार्जुन की छोटी कविता है, जिसकी रचना कवि ने 19 फरवरी, 1979 को की थी। इसमें उन्होंने शिशिर (ऋतु) को भगोड़ा की संज्ञा दी है, जिसका मध्य फागुन माह के मेघाच्छादित निशीथ में पुनरागमन होने वाला है। ध्यातव्य है कि फागुन माह

को ऋतुचक्र की दृष्टि से शिशिर (पतझड़) का द्वितीयार्ध, उत्तरार्द्ध या परार्द्ध माना गया है। जब वह अभी विद्यमान है ही, तब पुनरागमन किसका होगा? एक माह पूर्व माघ में ही उसका आगमन हो चुका है। अस्तु, वर्ष की दृष्टि से उसका पुनरागमन अवश्य कहा जाएगा। कवि ने 'द्विरागमन' शब्द का प्रयोग किया है, जिसका बिहार के मिथिलांचल में अर्थ होता है- कन्या की ससुराल-विदाई। इसका वास्तविक अर्थ होगा- फागुन के बाद शिशिर की विदाई। मध्य माह में हल्की बारिश इस बात की ओर इंगित करती है कि उसकी आँखों से विछोहजन्य आँसू की बूँदें टपक रही हैं।

बहरहाल यह कविता सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की 'मेघ आए' का सहज स्मरण कराती है। आलोच्य कविता में प्रयुक्त 'टापुर-टुपुर' शब्द नाद-सौन्दर्य की सृष्टि करता है; जैसे-"मध्य फाल्गुनेर मेघला निशिथे/ एकटु परेइ हबे/ पलातक शिशिरेर द्विरागमन/एखनि हबे आरंभो/बृष्टिर टापुर-टुपुर।"[7]

प्रकृति-प्रेम का गौण रूप 'आद्या छान्दसी', 'एइ रथ', 'आमारा कृतार्थ होयेछि....' इत्यादि कविताओं में देखा जा सकता है। इनमें कहीं श्रावण माह की मध्य रात्रि तो कहीं शरद माह की ब्रह्म वेला चित्रित हुई है। इन कविताओं में 'दिशा' और 'काल' - ये दोनों तत्त्व मुखर हैं।

2. प्रेमपरक कविताएँ:

इस कोटि की रचनाओं में 'आचमका होलो भाग्योदय', 'छलनगर नामगंध नेइ', 'दीप्त सीमंत', 'भालोबासार आदान-प्रदान', 'अफुरंत मोउचाक', 'आमि वाचस्पति इत्यादि उल्लेख्य हैं। 19 फरवरी, 1978 को रचित 'आचमका होलो भाग्योदय' (अचानक हुआ भाग्योदय) में नागार्जुन ने अपने भाग्योदय की बात एक भिन्न संदर्भ में की है। वह है-पाकिस्तान रेडियो से प्रसारित कार्यक्रम 'मल्काए तरन्नुम' के अन्तर्गत मशहूर गायिका नूरजहाँ का गीत-"कजरारि अँखियाँ में निंदिया न आए। जिया घबराए। पिया नहिं आए।"[8] सुनकर कवि का खिल उठना। उनकी दृष्टि में उनका यही भाग्योदय है; क्योंकि बरसों बाद अपनी पसंदीदा गायिका नूरजहाँ को सुनने का संयोग प्राप्त हुआ। 1947 में विभाजन के बाद वे भारत छोड़कर पाकिस्तान में बस गई थीं। इस गीत ने उन्हें भीतर से अनुरंजित किया। यह परिवर्तन अचानक हुआ। इसलिए, कवि ने उसे 'आचमका होलो भाग्योदय कहकर कलमबद्ध कर लिया- "सारा दिन सारा रात्रि/अनुरणित होते थाकलो/ कर्ण-कुहरे आमार/ ओर गानेर ओइ कोलिगुलि", अर्थात् सारा दिन, सारी रात/ गूँजती रहीं/ मेरे कर्ण-कुहरों में/ गीत की कड़ियाँ।[9]

कुछ ऐसा ही अनुभव एकबार हरिशंकर परसाई को हुआ था, जब रेडियो पर नूरजहाँ की दर्दीली आवाज में "तुम कहाँ हो आवाज दो?" नामक गीत बजा। बिस्तर पर लेटे-लेटे परसाईं जी ने उसी अंदाज में कहा-"रानी, मैं यहाँ हूँ।" तभी उनकी बहन ने अपने बच्चों से कहा- "जाकर देखो, मामा को क्या हुआ है?" भाँजा-भाँजी दौड़े आए और पूछा-"मामा, आपको क्या हुआ?" "कुछ नहीं; करवट बदलते समय पसली में ट्रांजिस्टर जरा चुभ गया।" सच पूछिए तो ट्रांजिस्टर से आ रही नूरजहाँ की आवाज उनके दिल में चुभ गई थी।

कुछ ऐसा ही एहसास 'कजरारि अँखियाँ में निंदिया न आए' गीत सुनकर नागार्जुन को भी हुआ था।

'छलनार नाम गंध नेइ (13.07.1979) शीर्षक लघु कविता में कवि ने प्रेम का निश्छल रूप देखा है। कविता दो खंडों में विभक्त है- प्रथम खंड में सिन्दूर-तिलकित प्रेयसी का रूप-वर्णन हुआ है, जबकि द्वितीय खंड में तिलोत्तमोपम प्रेयसी से मिलने की तड़प- "कोथाय छिलि तुई आमार तिलोत्तमे/ भूलिनि तो कखनो तोमाके सुमध्यमे", अर्थात् कहाँ रहीं अबतक

तुम मेरी तिलोत्तमे/ भुला कहाँ पाया कभी, तुमको सुमध्यमे/ प्रीतिस्निग्ध बुद्धि-दीप्त, दो आँखें यहाँ/ यहाँ किसी छल का नामगंध भी कहाँ।''[10]

21 जुलाई, 1978 को रचित कविता 'दीप्त सीमंत' में कवि ने अपनी पत्नी अपराजिता देवी को याद किया है, जब उन्होंने उनके कुंतलित भाल में सिन्दूरदान किया था। उन दिनों पत्नी किशोरी थी। उनकी सद्यःसिन्दूरित माँग आज भी उनकी स्मृति में किसी पुरातात्त्विक धरोहर की तरह दीप्त-संदीप्त हो रही है- ''अथच एइ चेतना पटले/ ओ ज्वल-ज्वल करिते छे/ तोमार सेइ सद्य सिन्दूरित सीमंत खानि।''[11]

'भालोबासार आदान-प्रदान (प्रेम का आदान-प्रदान) शीर्षक कविता का रचना-काल 19 फरवरी, 1979 है। तेरहवर्षीय प्रेमी तथा नौवर्षीया प्रेमिका का प्रेम इसका प्रतिपाद्य बना है। दोनों के निश्छल प्रेम की साक्षी बनी है हरसिंगार की एक जोड़ी झाड़ी। वंग-प्रांत में इस तरह के बाल्यकालिक या कैशोर्यकालिक प्रेम पर वक्र दृष्टि नहीं रहती, जैसी बिहार आदि प्रांतों में। वहाँ इसका उदात्त रूप दिखाई पड़ता है। यही कारण है कि बंगाल में इसे 'भालोबासा' कहा गया है। प्रेम में तुच्छ-से-तुच्छ चीजें भी अच्छी लगती हैं; जैसे - ये पंक्तियाँ -''नैवेद्य बले/ बासी जिलिपिर खंडित अर्द्धांशे/ से जे कि अपूर्व आस्वाद", अर्थात् नैवेद्य के नाम पर बासी जलेबी के आधे टुकड़े में भी कैसा अपूर्व स्वाद![12]

22 मार्च, 1979 को रचित कविता 'अफुरंत मोउचाक' का अर्थ होता है- प्रेम का अक्षय मधुछत्र। यह मधुमक्खियों का रसपूरित छत्र (छत्ता) नहीं, जो चुक जाए- छीज जाए। तभी शुभ्रवसना पत्नी की स्मृति उन्हें रसलोलुप भ्रमर बनने से रोक लेती है। यहाँ शुभ्रवसना सरस्वती नहीं, अपितु पत्नी अपराजिता देवी है।

'आमि वाचस्पति' (मैं वाचस्पति) की रचना 19 फरवरी, 1979 को हुई थी। कविता छोटी, मगर प्रभविष्णु है। इसमें कवि ने स्वयं को वाचस्पति मिश्र और पत्नी को भामति (वाचस्पति की पत्नी) माना है। वाचस्पति पुस्तक-लेखन में इतने तल्लीन हो गए थे कि उन्हें पता ही नहीं चला कि कब उनकी जवान पत्नी वृद्धा हो गई। पुस्तक पूरी करने के बाद एक दिन उन्होंने 'भामति' से पूछा कि तुम कौन हो? मैंने तुम्हें पहचाना नहीं। लगभग यही स्थिति नागार्जुन की भी रही। भामति से दूसरा अर्थ 'सरस्वती' भी निकलता है। 'वाचस्पति' का अर्थ विद्या का पति होता है। पंक्तियाँ देखिए- ''तुमइ तो आमार आद्या प्रणयिनी/सारा जीवन अनुधावन कोरेछि तोमाके।''[13]

उपरिविवेचित ये सारी कविताएँ कवि के प्रेमी-रूप से परिचित कराती हैं।

3. राजनीतिपरक कविताएँ:

नागार्जुन की इस कोटि में वे कविताएँ आती हैं, जो भारतीय राजनेताओं को लक्ष्य कर रची गई हैं; जैसे- चन्द्रशेखर, मोरारजी देसाई, चौधरी चरण सिंह जगजीवन राम प्रभृति। इनमें चौधरी चरण सिंह पर सर्वाधिक चार कविताएँ हैं। ये कविताएँ उनके कठोर और कोमल-दोनों रूपों को उजागर करती हैं।

'प्रवचनेर फोयारा', अर्थात् प्रवचन की फुहार शीर्षक कविता के केन्द्र में जनता पार्टी-नीत गैर-कांग्रेसी सरकार के तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी भाई हैं। यह कविता उनके कार्यकाल के दौरान 3 जून, 1978 को लिखी गई थी। इस कविता का स्वर मुख्यतः व्यंग्यात्मक है। बुढ़ापे में मोरारजी को प्रधानमंत्री की कुर्सी मिली थी। वे 24 मार्च, 1977 को प्रधानमंत्री बने थे और इस पद का सुख-लाभ कर रहे थे। जनता को उनकी सरकार से बड़ी उम्मीदें थीं, जो दो साल के अन्दर ही चकनाचूर हो गई। बाद में उन्हें चौधरी चरण सिंह के लिए गद्दी छोड़नी पड़ी। कविता की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं- ''नव यौवन लाभे महाखुशी मोरार जी भाई/ दिवारात्रि छाड़ेन प्रवचनेर फोयारा/

चालिए जाच्छेन जीवन-जल चक्र-चालन/ फलाहार।''[14] अर्थात् नवयौवन-लाभ से अत्यंत प्रसन्न मोरार जी भाई दिन-रात प्रवचन की फुहार छोड़ते हैं। जीवन-जल (स्वमूत्र), चक्रचालन तथा फलाहार चलाए जा रहे हैं।

3 जून, 1978 को ही रचित 'कोथाओ कि बैराम', अर्थात्' कोई व्याधि नाम से रचित कविता के केन्द्र में बाबू जगजीवन राम हैं। इसका स्वर भी व्यंग्यात्मक है।

एक बार बाबू जगजीवन राम बीमार पड़े। सबको चिंता हुई। यह बीमारी वास्तविक कम, राजनैतिक अधिक थी; क्योंकि उनकी राजनैतिक पकड़ ढीली पड़ रही थी। कवि ने उपहास के स्वर में कहा- अच्छा-भला तो कट रहा है। सुबह-शाम टहल-बुल लेते हैं, अच्छी तरह खा-पी लेते हैं-''भालइ कोरे जाच्छेन कालक्षेप।'' [15] यानी अच्छा-भला तो कट रहा है।

जगजीवन बाबू को लक्ष्य कर लिखी गई एक अन्य कविता 'चाक-चिक्य दुम-दाम (5 जुलाई, 1978) में कवि ने उनके थुलथुल शरीर के साथ-साथ चाकचिक्य व धनाधिक्य पर चुटकी ली है-''दुम-दाम, चाक-चिक्य/ टाका कड़िर आधिक्य/ मतेर अनमिल पार्थक्य/ भुँड़ि एवं बार्धक्य/ बाबू श्री जगजीवन राम।''[16]

3 जून, 1978 को 'रेड्डी संजीवन नीलम' 'नामक कविता में कवि ने इस बात पर अफसोस प्रकट किया है कि वर्तमान प्रजातांत्रिक व्यवस्था में संजीव रेड्डी राष्ट्रपति नहीं बन सकते; क्योंकि अतीत में जिस तरह रबर-स्टांप-टाइप निरीह राष्ट्रपति हुए हैं, वे उनसे अलग हैं। देखिए- ''उनि होते पारबेन ना/ रबार स्टाम्प गोछेर/ प्रभावशून्य बोका राष्ट्राध्यक्ष/ येमन हुये गेछेन अतीते/ अनेक-अनेक।''[17]

8 जून, 1978 को रचित 'आहा बेचारा चन्द्रशेखर' में कवि ने समाजवादी नेता चन्द्रशेखर का मजाक उड़ाया है- ''की भाबे करेन मेंटेन भार साम्य/ जनतापति चन्द्रशेखर/ द्विदल-त्रिदल-पंचदल -अदल-बिदल/ सदल-निर्बल-दलातीत-दलोर्ध्व/ एकोदर, पृथक ग्रीव, अन्यान्य फलभक्षी।''[18]

जैसा कि प्रारंभ में ही कहा गया है कि सबसे अधिक चार कविताएँ चौधरी चरण सिंह को लक्ष्य कर रची गई हैं; जैसे-बिनिद्र चरण सिंह (3 जून, 1978), कोथाय गेलो सिंह चरण (3 जुलाई, 1978), गदिच्चूत हये (8 जुलाई, 1978) तथा चरोण-मुरारी (14 जुलाई, 1978)। इन सारी कविताओं में कवि ने चौधरी चरण सिंह के प्रधानमंत्रित्व की लालसा को व्यंग्यात्मक अंदाज में उजागर किया है। 'बिनिद्र चरण सिंह (निद्राविहीन चरण सिंह) कविता में कहा गया है कि चौधरी साहब प्रधानमंत्री बनने के लिए इतने व्याकुल हो गए कि उनकी आँखों की नींद गायब हो गई। 'कोथाय गेलो सिंह चरण' का स्वर भी व्यंग्यात्मक है- ''कोथाय गेलो सिंह चरण/ शृगालेर गुफाय राजकरण/ गोदिहरण महाहरण।''[19] गदिच्चूत हये (गद्दीच्युत होकर) कविता में चौ. चरण सिंह के राजनैतिक अधःपतन को निशाना बनाया गया- ''गदिच्चूत हये/ मुंडहीन एकेबारे/ देखाच्छेन कबंधेर मतन/ आहा बेचारा चरण सिंह।''[20] अर्थात् गद्दीच्युत होकर/ एकदम बेसिर/ लग रहे हैं जैसे कबंध हो गए हैं/ हाय, बेचारे चरण सिंह।

14 जुलाई, 1978 को रचित कविता 'चरोण-मुरारी का वर्ण्य विषय चौ. चरण सिंह तथा मोरार जी देसाई- नीत जनता पार्टी सरकार की दुर्दशा है। फलस्वरूप, जनता की आशाओं पर वज्रपात। इसी स्थिति पर श्वेतपत्र जारी करती नजर आती है यह कविता।

व्यक्ति-केन्द्रित इन राजनैतिक कविताओं में नागार्जुन ने आजाद भारत के कुछ अग्रणी नेताओं की पदलोलुपता, व्यक्ति-केन्द्रिकता, फलस्वरूप, जनता की आशाओं-आकांक्षाओं की कसौटी पर उनकी भयावह

विफलता का उद्भेदन किया है। नेताओं की इस जमात में एकमात्र नेता नीलम संजीव रेड्डी हैं, जिनके प्रति कवि को सहानुभूति है; क्योंकि हर तरह से योग्य होते हुए भी वे भारत के राष्ट्रपति नहीं बन सके। लेकिन, बाद में तो वे बने ही। इसकी ओर कवि ने संकेत नहीं किया।

4. व्यंग्यपरक कविताएँ:

व्यंग्य नागार्जुन की कविताओं की बड़ी विशेषता है। वस्तुस्थिति को धारदार बनाने के लिए कवि यथावसर व्यंग्य का प्रयोग करता रहा है। नागार्जुन को तो इसमें महारत हासिल है। डॉ. नामवर सिंह के शब्दों में- ''नागार्जुन के काव्य में व्यक्तियों के इतने व्यंग्य-चित्र हैं कि उनका एक विशाल अलबम तैयार किया जा सकता है।''[21]

व्यक्ति-केन्द्रित राजनैतिक कविताओं को छोड़ ऐसी नौ कविताएँ हैं, जो व्यंग्यात्मक प्रकृति की हैं; जैसे-येटा-सेटा (9 जुलाई, 1978), सुगन्धितो मुर्खेर सारहीन प्रलाप (6 अगस्त, 1978); युग-पुरूष (27 सितंबर, 1978), सबाइ बलतो ओके संत महाराज (7 अक्टूबर, 1978), निर्लज्य नाटक (5 नवंबर, 1978); कि दरकार नाम-टाम बलार (3 फरवरी, 1978), किम्भूत किमाकार कर्णाभूषण (12 मार्च, 1979); वयस्क पुलिस मैन-प्रकांड भुड़िवाला (22 मार्च, 1979), कपाल भेंगे छिलो (5 अगस्त, 1979)।

दो छोटे-छोटे 'येटा-सेटा' अर्थात् यह भी, वह भी कलकत्ते (अब कोलकाता) में रचित, मात्र छोटी-छोटी बारह पंक्तियों वाली यह कविता बंगला का अल्पज्ञान रखने वालों के लिए भी बोधगम्य है। आलोच्य कविता में 'मोटी बीबी तथा मोटा सेठ' उन्हें कहा गया है, जो दूसरों का हिस्सा हड़प लेते हैं। ऊँची-ऊँची अटारी इसका प्रतीक है। देखिए- ''तोरइ पेटे/ आमार कोटा'' [22] अर्थात् 'तुम्हारे पेट में', 'हमारा कोठा' में कवि का जनवादी दृष्टिकोण लक्षित है। 'कविता में कुल बिलकुल छोटे-छोटे अट्ठाईस शब्द प्रयुक्त हुए हैं। पर, व्यंग्य की दृष्टि से मारक है। शिल्प के स्तर पर कवि का एक अभिनव प्रयोग।

'सुगन्धितो मुर्खेर सारहीन प्रलाप' (सुगंधित मूर्ख का सारहीन प्रलाप) कविता के केन्द्र में एक युवा शिक्षा राज्यमंत्री है, जो हाल ही में मंत्री बना है। किसी विद्यालय के एक समारोह में पंद्रह मिनट का उसका भाषण यंत्रणा से कम नहीं था- ''आमादेर एमन दुर्विपाक/जे ओर आजे-बाजे कथा/ सुनतेइ होलो लागातार/ पनेरो मिनिट पर्यन्तोऽ/ तिमिर बरण मोटा-सोटा/ नेता छाप ओइ युवक/ मास दुऐक पूर्वेइ/ शपथ ग्रहण कोरे छिलो।'' [23] अर्थात् हमारा ऐसा दुर्योग/ कि उसकी फिजूल की बातें/ सुननी ही पड़ीं लगातार/ पन्द्रह मिनटों तक/ साँवले से मोटे-ताजे/ नेता छाप उस युवक ने/ लगभग दो माह पहले/ शपथ ग्रहण किया था।

उसके बारे में दो बातें सामने आती हैं- पहली यह कि मंत्री समाजवादी नहीं हो सकता और दूसरी कि उसे शिक्षा-विभाग क्यों मिला? इनका एक ही उत्तर होगा कि आज की तथाकथित जनतांत्रिक व्यवस्था में कुछ भी संभव है। कवि ने इसी व्यवस्था पर तो व्यंग्य किया है।

'सबाइ बलतो ओके संत महाराज (सब उसको बोलते हैं संत महाराज) में कवि ने ढोंगी संत के कार्य-व्यापार पर व्यंग्यात्मक प्रहार किया है; यथा-''ओ एके बारेइ योगेश्वर सेजे छिलो/ सबाइ बलतो ओके संत महाराज/ राजधानिर विमानबदरे/ धरा पड़ले/ सारा दिन ओके थाकते होलो/ सिक्युरिटिर आओताए।''[24] अर्थात् वह बना हुआ था साक्षात् योगेश्वर/ सभी कहते थे उसे संत महाराज/ जब राजधानी के हवाई अड्डे पर/ पकड़ा गया/ सारा दिन उसे रहना पड़ा/ सिक्युरिटिर के आव-भगत में।

आज की तिथि में हमारा देश ऐसे कई ढोंगी-पाखंडी संतों से भरा है। उनमें कई जेल की हवा तक खा रहे हैं।

'निर्लज्य नाटक' कविता राजनीति में निर्लज्जता

की बात करती है। राजनीति अब जनसेवा नहीं, निजी महामुक्ति का माध्यम है- 'कोथाओ अध्यक्ष एवं कोथाओ उद्धाटक/ खुले दियेछि शत-शत महामुक्तिर फाटक होता हूँ।''[25] अर्थात् कहीं होता हूँ अध्यक्ष, कहीं उद्धाटनकर्त्ता/ खोल चुका हूँ शत-शत महामुक्ति के फाटक।

'किम्भूत किमाकार कर्णाभूषण' (बड़ा बेढंगा कर्णाभूषण) कविता में कवि ने कर्णाभूषण की बेढंगी बनावट पर चुटकी ली है; जैसे-जिसने यह कर्णाभूषण धारण कर रखा है, वह सामान्य नारी नहीं हो सकती। वह या तो हिडिम्बा हो सकती है या स्त्री-वेश में कोई पुरुष अथवा गंगटोक की भुटिया गोत्रीय नारी। इससमय हरियाणा इम्पोरियम उसकी चकाचौंध से धन्य-धन्य हो रहा है। देखिए - ''एमोन बड़ो धाँचेर/ किम्भूत किमाकार/ कर्णाभूषण आर कोनो मेयेके/ कस्मिन काले/ धारण कोरते देखिनि।''[26] इस कविता में कवि ने पश्चिमी अन्धानुकरण को भी निशाना बनाया है।

'वयस्क पुलिस मैन-प्रकांड भुड़िवाला' (बड़ी तोंदवाला वयस्क पुलिस) में कवि ने पुलिस की रिश्वतखोर प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया है। इस पुलिस वाले की तोंद उसकी खादुर प्रकृति का द्योतक है, जहाँ अकर्मण्यता का भी वास है। पुलिस वाले के लिए प्रयुक्त 'वयस्क' विशेषण उसकी बढ़ी हुई उम्र की ओर संकेत करता है, जो एक के बदले दो नोट लेता है। कवि ने नोट लेने के उसके तरीके को इन शब्दों में दिखाया है- ''एक टाकार नोट/ निलो ना/ दुइ आङुल तुले/ सप्रतिभ इंगित कोरलो.../ संतर्पणे दुइ टाकार नोट/ आयत्त केर/ आबार बललो/ 'सलाम,[27] बाबा साहेब।'' अर्थात् एक का नोट/ लिया नहीं उसने/ दो उँगलियाँ दिखाकर/ साफ-साफ जताया/ नफासत से दो का नोट/ दबाकर/ दुबारा बोला वह/ ''सलाम, बाबा साहेब!

'कपाल भेंगे छिलो' (कपाल फोड़ दिया) एक छोटी-सी कविता है, जिसमें कवि ने छुआछूत नामक सामाजिक विरूपता पर व्यंग्य किया है। अछूतोद्धार का जो कार्यक्रम गाँधी जी ने चलाया था, उसके तहत अछूतों को मंदिर-प्रवेश की सामाजिक स्वीकृति भी मिलनी थी। मगर, उत्तर बिहार और यत्र-तत्र परंपरावादी लोगों ने विरोध स्वरूप मंदिर-प्रवेश कराते अछूतों के नेता का माथा फोड़ दिया था। देखिए-'गाँधिर कपाल भेंगे छिलो/आमार बाबार बाबा'।''[28] प्रसाद की प्रसिद्ध कहानी 'विराम चिह्न' में यही समस्या दिखाई गई है।

नागार्जुन की पर्यवेक्षण-शक्ति अद्‌भुत है। छोटी-से-छोटी और साधारण-से-साधारण चीजों तथा घटनाओं पर फोकस करना उनकी विभेदक विषेषता है। डॉ. नामवर सिंह सही फरमाते हैं-''उनकी कविता का संसार वस्तुतः वह लोकसामान्य जीवन ही है, जिसे अतिसामान्य समझकर अन्य कवि आँखें मूँद लेते हैं।''[29]

5. आत्मकेन्द्रित कविताएँ:

नागार्जुन ने स्वयं को लक्ष्य कर कई कविताएँ रचीं; जैसे- सकाले-सकाल (1 जून, 1978), भावना प्रवण यायावर (1 जून, 1978), अघोषित भारे (4 जुलाई, 1978), आमारा कृतार्थ होयेछि (9 जुलाई, 1978), कि दरकार नाम-टाम बलार (3 फरवरी, 1978) इत्यादि।

'सकाले-सकाल' (सबेरे-सबेरे) शीर्षक छोटी कविता में कवि सुबह-सुबह एक सेठ से मिलने जाते हैं। सेठ प्रातःकालीन भ्रमण पर निकले थे। बूढ़े दरबान ने बताया कि वे आठ बजे तक लौटेंगे। कवि के हाथ में एक नया काव्य-संग्रह देखकर जानने की इच्छा हुई, अर्थात् दरबान काव्य-प्रेमी था।

'भावणा प्रवण यायावर' एक मध्यम आकारिक कविता है, जिसमें कवि की यायावरीय वृत्ति वर्ण्य बनकर उपस्थित हुई है। कविता का वृद्ध, अर्धपागल, जीर्णकाय यायावर कोई और नहीं, स्वयं कवि नागार्जुन है। वह आशंकित है कि किसी दिन

दुर्घटनावश मारा जाएगा। उसका मृत शरीर कलकत्ते की 'ट्राम लाइन' के किनारे पड़ा मिलेगा। कवि का यायावर चाहता है कि कोई उसे समझा-बुझाकर घर में बिठा रखे। कोई इतना भर कहे कि दादा, अब तुम्हारी उम्र इधर-उधर भटकने की नहीं रही। तुम्हें अब 'क्षेत्र-न्यास', अर्थात् स्थानिक संन्यास ले लेना चाहिए। पालथी मारकर साहित्य-साधना करनी चाहिए- ''दादू बयस हयेछे एखन आपनार/ क्षेत्रन्यास निन/ अभ्येस करून बिरम प्रत्ययेर/ धारन करून चरम परितोषेर भाब... केउ नइ मने होच्छे ओर/ एमन आत्मीय।''[30]

इस कविता में कवि की करुणाव्यंजक स्थिति सहज ही लक्षित की जा सकती है।

'अघोषित भारे', अर्थात् अघोषित भरा-भरा शीर्षक कविता के केन्द्र में भी स्वयं कवि है। यहाँ भी वे मानसिक यायावरी करते दृष्टिगत होते हैं। उनका घुमक्कड़ मन कभी एकांतवास करता है तो कभी चुपके से सह्याद्रि की उपत्यका में निर्मित सर्किट हाउस चला जाता है, कभी सिक्किम के 'लामा मठ' में दाखिल हो जाता है तो कभी बस्तर के वनांचल में अवस्थित 'कुटीर परिसर' में। इसतरह, अर्धपालतू विडाल की तरह उनका यायावर-मन इधर-उधर की सैर करने निकल पड़ता है- ''पोष ना माना आधा पालतु/ बिडालेर मोतोन/ उधाओ होए जाए।''[31] तात्पर्य यह कि उनका मन अर्धनियंत्रित है, अर्धानुशासित है। कविता का स्थापत्य ताजगी का एहसास कराता है।

वर्णनात्मक शैली में रचित कविता 'आमारा कृतार्थ होयेछि...' में कवि ने बरसते सावन की रात में अपने जागने रहने का रोचक वर्णन किया है। बाहर मुसलाधार बारिश, अंदर कमरे में तीन जन रतजगा कर रहे हैं। एक विडाल, एक चूहा और एक स्वयं कवि। विडाल चूहे के पीछे परेशान तो कवि किसी भाव-तरंग के पीछे। उधर चूहा पकड़ा जाता है, इधर किसी कविता की भाव-तरंग। वैज्ञानिक आर्कमिडिस की तरह कवि उछल पड़ते हैं- ''आमार बन्धु बिडाल! बाहिरे अझोर अबिराम बृष्टि चालू/ आमिओ तो धोरे फेलेछि/ तोर एइ बाहादुरी के..../ आमारा कृतार्थ होयेछि/ समाने-समाने/ शाबाश रे शाबाश, आमार दुलाल!''[32]

कवि को प्रतीक रूप में 'विडाल' बहुत प्रिय है। उसकी कविताओं में यह प्रतीक बार-बार आता है। सच पूछिए तो यह 'विडाल' कोई और नहीं, उनका, अपना ही मन है। वही कवि-मन मूषक-रूपी भाव-तरंग की ताक में बैठा-खड़ा रहता है। 'बाहर की बारिश' प्रतिकूल अस्त-व्यस्त परिस्थिति है, जो उसे चाहकर भी नहीं रोक पाती।

'कि दरकार नाम-टाम बलार' (क्या जरूरत है नाम-धाम बताने की) नागार्जुन की लंबी कविता है। प्रथम दृष्ट्या कविता के प्रारंभ में प्रयुक्त 'श्री-श्री प्रेमानंद' को देख पाठकों को बंगाल के संत प्रेमानंद का भ्रम हो जाता है, जिनको लक्ष्य कर निराला ने एक लंबी प्रशंसात्मक कविता रची है। लेकिन, आलोच्य कविता का 'प्रेमानंद' तो स्वयं कवि है, अर्थात् जन-प्रेम में आनंदित रहने वाला। जे.एन.यू.- कैम्पस के टीले पर बैठा कवि अपने बारे में क्या-क्या नहीं सोच रहा है; यथा-स्वघोषित 'प्रेमयोगी', आदिसिद्ध 'सरहपा', 'वज्रयान का आदिपुरुष', 'रजनीश का वृद्ध प्रपितामह/ 'वृद्ध प्रमातामह', 'बुजुर्ग हिप्पियों का आदि ब्रह्म' 'प्रज्ञादीप्त अंकुरित-यौवना किशोरी' के हाथों झींगा मछली के 'कटलेट' का भोग लगाने वाला सम्यक् सम्बुद्ध-सम्यक् चतुष्टय का अन्वेषी।

आत्मकेन्द्रित कुछ अन्य कविताएँ भी देखी जा सकती हैं; जैसे-'शिङ्-टिङ-नेइ' (27 जुलाई, 1978), थाकतो उद्यत (8 अगस्त, 1978), विप्लव विलास (20 अगस्त, 1978), आमि मिलिटारिर बुड़ो घोड़ा (27 सितंबर, 1978), आमि वाचस्पति (19 फरवरी, 1979)।

'शिङ-टिङ्-नेइ (सींग-वींग नहीं) कविता में कवि ने ईमानदारीपूर्वक अपनी दुर्बलताओं को स्वीकारा है। बचपन में ही माँ चल बसी। कोई सगा जीवित नहीं। एकाकी विज्ञापन की तरह घूमता हूँ आदि-आदि। नामवर सिंह ने सही ही लिखा है- "यह ऐसी कविता है जिसमें कवि ने पारदर्शी ईमानदारी के साथ अपनी दुर्बलताओं और अपनी व्यथा को वाणी दी है।"[33] कविता की ये पंक्तियाँ इसे प्रमाणित करती हैं-"आमार शिङ् टिङ् नेई/मा आमा के ऐका छेड़े गेछे/ स्तन्यापानेर अवसर पाइनि/ आमार कोनो सहोदर जीवित नेई।" [34]

'थाकतो उद्यतो' (रहता उद्यत) कविता की रचना के समय कवि की उम्र न केवल सड़सठ वर्ष की हो गई थी, बल्कि राजयक्ष्मा के कारण शरीर दुर्बल भी पड़ गया था। दुर्बलतावश बाँहें उठाकर अपने मित्रों को आलिंगित भी नहीं कर सकता था। देखिए- "प्रतिपल थाकतो उद्यत/ बंधु सुलभ कोला कुलिर जन्यो/ प्रतिपल थाकतो उद्यत/ धनुषेर प्रत्यंचाए बोसिए शिलीमुख/ शत्रुर संधाने।"[35] 'विप्लव विलास' मात्र चार पंक्तियों की कविता है, जिसमें कवि ने अपने बुढ़ापे के विप्लव को नकारा है।

'आमि मिलिटारिर बुड़ो घोड़ा' (मैं मिलिटरी का बूढ़ा घोड़ा) कविता में कवि ने अपनी तुलना मिलिटरी के बूढ़े घोड़े से की है, जो मिलिटरी से रिटायर्ड किये जाने के बाद तांगे वाले के पास बेच दिया जाता है। तांगावाला आँखों पर पट्टी डाल उसे सीधा चलने के लिए बाध्य करता है। इस कविता में कवि ने दो बातों पर फोकस किया है- पहली, घोड़ा कभी बेकार नहीं होता; दूसरी, मिलिटरी में शानदार सेवा देने के बावजूद उसे कोचवान के निर्देश का आँख मूँदकर अनुसरण करना पड़ता है।

इसमें कवि ने बुढ़ापे में भी उपयोगिता सिद्ध करने का प्रयास किया है, साथ ही, अपनी करुणाव्यंजक विवशता भी। 'पाथरेर शिल्प' (13 मार्च, 1979), 'कवि' (30 जुलाई, 1979) आदि भी कवि की आत्मव्यंजक कविताएँ हैं। इनमें 'कवि' नामक कविता उनके कवि-जीवन का सारांश है। 'काव्य-शिशु' (10 जुलाई, 1978) नागार्जुन की एक ऐसी कविता है, जिसमें उन्होंने अपने काव्य-शिशु का जन्म-वृत्तांत संक्षेप में सुनाया है। उस काव्य-शिशु की धाई और जन्म देने वाली माँ जो कवि स्वयं है। कविता कवि की दुर्निवार प्रसव-पीड़ा का ही तो परिणाम है। देखिए- "भूमिष्ठ हलो/ आमार काव्य-शिशु/ निशूति रात्रे/ केउकि-शुने छे ओर क्रन्दन।"[36]

कवि-जीवन का सारांश है। इसतरह, ये सारी कविताएँ नागार्जुन के कवि-जीवन की विविध चित्रावलियाँ हैं।

6. नागार्जुन की अन्य बंगला कविताएँ:

उपरिविवेचित कविताओं के अतिरिक्त नागार्जुन ने कुछ ऐसी कविताएँ भी रची हैं, जो अलग कोटि की माँग करती हैं; जैसे-ओ देरइ जन्य (3 जुलाई, 1978), विद्यासागर (4 जुलाई, 1978), भाबेर जोनाकि (6 जुलाई, 1978), ओइ माताल युवक (24 जुलाई, 1978), प्रौढ़ कापालिक (5 नवम्बर, 1978), एइ रथ (18 फरवरी, 1979), एइ0 जे0एन0यू0 (19 फरवरी, 1979), ओइ मध्यान्हे (9 अगस्त, 1979) तथा 'बोकामिर एइ यज्ञ (13 मार्च, 1992)।

एक दिन ब्राह्म वेला में प्रातःभ्रमण के दौरान कवि को आद्या छान्दसी 'सरस्वती' के शुभ दर्शन हुगली तट-स्थित बाग बाजार में हुए। वे कमलासना हाथ में कलश लिये थीं। उनके दर्शन मात्र से कवि के मन का अन्धकार मिट गया, मानो उनका पुनर्जन्म हुआ हो। कवि कृतज्ञ भाव से झुक गया-"ओ गो माँ। रूपसी कमलासने विमले/महाब्रह्मेर मानसकन्ये जाड्यहरे/ तव सुगंभीर अनुकम्पाय कृतार्थ आमि।"[37]

विद्यासागर बंगाल के सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् और समाज-सुधारक थे। एक बार अज्ञात लोगों ने उनकी प्रतिमा को नुकसान पहुँचाया। बंगाल के न तो सिद्धांतशंकर राय और ज्योति बसु जैसे प्रभावशाली

नेताओं ने इस कुकृत्य की भर्त्सना की और न ही 'आनंदबाजार', 'युगांतर' जैसी पत्रिकाओं और 'स्टेट्समैन' जैसे अखबार ने। 'विद्यासागर' कविता में कवि ने यही तो कहा है। ''कोथाय जे लुकिय आछे ऐरा/ तोरूदेर अग्रोणी नवयुगेर ऐरा।''[38], अर्थात् क्या बिगाड़ा था तुमने इनलोगों का/ क्यों किया शिकार 'इनलोगों' ने/ तुम्हारे सिर का दो-दो बार/ कहाँ छुप गए हैं। वे अग्रणी तरूण, नवयुग के 'शेर'।

जिसतरह जुगनू अपनी इच्छा से जंगल में घूमते-फिरते हैं, अपनी इच्छा से सोते-जागते हैं, अपनी इच्छा से निशाभिसार करते हैं, उसीतरह कवि के भाव भी। मात्र चार पंक्तियों वाली कविता 'भाबेर जोनाकि का यही संप्रेष्य है।

'ओइ माताल युवक' (वह उन्मादी युवक) कविता का छत्तीसवर्षीय युवक 'प्रभात' इन दिनों असामान्य आचरण कर रहा है, अर्थात् पागल हो गया है। यह चिंता न केवल उसके पिता, बल्कि कवि को भी खाए जा रही है। युवाशक्ति राष्ट्र की शक्ति और संपदा होती है। देश के लिए कुछ करने की उम्र में यदि वह कुछ न कर पाने की स्थिति में पहुँच जाए तो किसी को भी सात्विक चिंता होगी। फिर कवि तो संवेदनशील प्राणी है। चिंता होगी ही। उस युवा ने कवि को अपनी काव्य-प्रतिभा से प्रभावित किया था।

'नामदास'(20 अगस्त, 1978) कविता का स्वर किंचित् व्यंयात्मक है। इसमें कवि ने हनुमान को रामदास कहकर मूर्ख (बोका) बताया है तो समुद्र पर पुल बनाने वाले नल-नील को अभियंता घामदास, अर्थात् पसीना बहाने वाले, लंकेश रावण को कामदास सिद्ध किया; क्योंकि कई पत्नियों का स्वामी होने के बावजूद उसने पराई स्त्री 'सीता' का अपहरण किया था। कुछ ऐसा ही कह गए आदि कवि नामदास। कवि के ही शब्दों में-''आस्तो बड़ो बोका छिलो हनुमान रामदास/ ये युगेर अभियंता नल-नील घामदास/ध्वस्तो होलो दसमुख लंकापति कामदास/ एटाई बले गेलेन आदि कवि नामदास।''[39]

'युग-पुरुष' कविता का स्वर भी व्यंग्यात्मक है। इस तरह की कविताएँ वे हिन्दी में कर चुके हैं। नागार्जुन की यह ट्रेड मार्क-शैली है। उदाहरण के लिए- ''भ्रष्ट-भ्रष्ट महाभ्रष्ट/ कष्ट-कष्ट महाकष्ट/ पष्ट-प्ष्ट महापष्ट।''[40]

पाठकों को इनका शब्द-प्रयोग अटपटा लग सकता है, पर है अर्थपूर्ण। किन्तु प्रश्न है कि 'युगपुरुष' है कौन? प्रारंभिक तीन पंक्तियों में अर्थ का अवरोही या आरोही क्रम प्रयुक्त हुआ है; यथा- भ्रष्टझमहाभ्रष्टझकष्टझमहाकष्टझपष्ट (स्पष्ट) झमहापष्ट (महास्पष्ट) कभी-कभी नागार्जुन निराला की तरह ही अपने पाठकों को माथापच्ची करने के लिए छोड़ देते हैं।

मात्र चार पंक्तियों वाली 'प्रौढ़ कापालिक' शीर्षक कविता में कवि ने पाठकों के समक्ष तीन विकल्प रखे हैं- पहला यह संसार या जीवन एक अखाड़ा है, जिसमें तुम्हें प्रौढ़, अर्थात् परिपक्व कापालिक की तरह व्यवहार करना है। दूसरे शब्दों में, वीतराग-निष्काम जीवन जीओ। दूसरा, कुलीन, मगर जन्म से अंधे और जड़बुद्धि की तरह जीओ और तीसरा, यदि ऐसा नहीं कर सके तो जंगली पक्षी की तरह एकांतवास करते हुए अनाम मौत मरो। कवि ने पहला विकल्प चुना।

'एइ जे.एन.यू.' (यह जे.एन.यू.) कविता में कवि ने वहाँ बिताए अपने कुछ समय का स्मृत्यभिलेख प्रस्तुत किया है। उनकी दृष्टि में यह विश्वविद्यालय नवल-नवेलियों का उन्मुक्त लीला-प्रांगण है। उनकी भी इच्छा होती है वहाँ नामांकित होकर तिब्बती पढ़ने की। डॉ. नामवर सिंह, विमला प्रसाद, डॉ. मुजीब- अनुशंसा करेंगे ही।

देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू का कार्यकाल 1947 से 1964 के बीच रहा। 1947 से 1952 का काल उदय, अर्थात् प्रारंभिक काल माना जाएगा तो 1952 से 1957 के बीच का काल मध्याह्न-काल। इस बीच वे सूर्य की तरह प्रखर और

देदीप्यमान रहे। 'ओई मध्यान्ह' (उस मध्याह्न में) नामक छोटी कविता का अभिप्रेत अर्थ यही है।

पं. नेहरू के प्रधानमंत्रित्व के मध्याह्न-काल में ही किसी ने (नाम अज्ञात) कवि से जानना चाहा था कि यदि वे कम्युनिष्ट देश चीन की यात्रा पर जाना चाहें तो वह भिजवा सकता है। तब भारत से चीन का आपसी संबंध खराब नहीं हुआ था। यह सुनकर कवि को एक साथ रोमांच और हँसी-दोनों हुए। रोमांच इसलिए कि समानधर्मा देश को करीब से देखने-समझने का अवसर मिलेगा और हँसी इसलिए कि कहीं यह मजाक तो नहीं कर रहा। "यदि तुमि चीन जेते चाओ। से व्यवस्था आमि कोरे दिच्छि।××× ऊनि सोत्यि-सोत्यिइ/ भेतोरे ढूँकिए दितेन/ आमाके चीनेर सीमानाए/ नेहरू युगेर ओइ मध्यान्हे....।[41]

'बोकामिर एइ यज्ञ' (बेवकूफी का यज्ञ) कवि की अंतिम बंगला कविता है। इसके पूर्व उन्होंने सितंबर, 1979 में कविता रची थी। यह कविता मार्च, 1992 में रची गई है। इसतरह, दोनों के बीच तेरह वर्षों का लंबा अन्तराल है। इस कविता का स्वर भी व्यंग्यात्मक है। कवि-मन में उठ रहे भावों के उद्वेलन को उन्होंने 'मूर्खता का यज्ञ' की संज्ञा दी है- "ओ बुड़ो बुजरूक्/ तुमि आसत बड़ गाधा/ आ-ब-गा!!"[42] (ओ बूढ़े धुरंधर तुम हो महा-महा गधा (म-म-म)।

नागार्जुन की ये बंगला कविताएँ उनकी हिन्दी, संस्कृत तथा मैथिली कविताओं की तरह ही जनवादी संस्पर्श लिये हुए हैं। जिसतरह कबीर ज्ञानी होकर भी स्वयं को अज्ञानी समझता और कहता है, उसीतरह नागार्जुन भी। इन कविताओं में न केवल विषय की दृष्टि से विविधता है, बल्कि रूप-शैली की दृष्टि से भी। ये कविताएँ मुख्यतः अभिधाश्रित हैं, कहीं-कहीं लक्षणाश्रित और व्यंजनाश्रित भी। इनमे से अधिकांश कविताओं का स्वर व्यंग्यात्मक है। नागार्जुन की ये बँगला कविताएँ उनकी हिन्दी और मैथिली कविताओं का बढ़ाव ही मानी जाएँगी।

संदर्भ-सूची

1. शोभाकांत सं. नागार्जुन रचनावली-3, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2003 ई.पृष्ठ 6
2. वही; पृष्ठ 6
3. वही; पृष्ठ 8
4. मिश्र, हरिनारायण. यात्री, चेतना समिति, पटना, 2000 ई., पृष्ठ 50
5. शोभाकांत सं. नागार्जुन रचनावली-3, पृष्ठ 396
6. वही; पृष्ठ 398
7. वही; पृष्ठ 414-16
8. वही; पृष्ठ 376
9. वही; पृ0-376
10. वही; पृष्ठ 396-397
11. वही; पृष्ठ 400
12. वही; पृ0-418
13. वही; पृष्ठ 418
14. वही; पृष्ठ 380
15. वही; पृष्ठ 380
16. वही; पृष्ठ 390
17. वही; पृष्ठ 380
18. वही; पृष्ठ 382
19. वही; पृष्ठ 384
20. वही; पृष्ठ 390
21. सिंह, नामवर, नागार्जुन की प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2007, भूमिका
22. शोभाकांत सं. नागार्जुन रचनावली-3, पृष्ठ 394
23. वही; पृष्ठ 402
24. वही; पृष्ठ 410
25. वही; पृष्ठ 410
26. वही; पृष्ठ 42

27. वही; पृष्ठ 426
28. वही; पृष्ठ 430
29. वही; पृष्ठ 403
30. वही; पृष्ठ 378
31. वही; पृष्ठ 386
32. वही; पृष्ठ 392
33. नागार्जुन की प्रतिनिधि कविताएँ; पृष्ठ 8
34. नागार्जुन रचनावली: 3; पृष्ठ 400
35. वही; पृष्ठ 404
36. वही; पृष्ठ 396
37. वही; पृष्ठ 382
38. वही; पृष्ठ 382
39. वही; पृष्ठ 404-406
40. वही; पृष्ठ 408
41. वही; पृष्ठ 432
42. वही; पृष्ठ 434

डॉ. बहादुर मिश्र
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
तिलका माँझी भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर, बिहार

पुस्तक भारती रिसर्च जर्नल

Reg. No. 124726035RC0001
ISSN : 2562-6086
PRICE : $ 10.00 - Rs. 175

वर्ष 3, जुलाई-सितंबर, 2021 अंक 3

पुस्तक भारती के प्रकाशन

स्वामी, प्रकाशक और मुद्रक : प्रो. रत्नाकर नराले,
पुस्तक भारती, टोरंटो, कनाडा, 180 Torresdale Ave. M2R 3E4 से प्रकाशित.
Email : pustak.bharati.canada@gmail.com * Web: pustak-bharati-canada.com